मासिक समाचार पत्र

लोकविद्या पंचायत

● सूचना युग में बराबरी के विचार के पुनर्निर्माण का पत्र ●
● लोकविद्याधर समाज के पुनर्संगठन का वैचारिक आधार पत्र ●
● पूँजी आधारित समाज के स्थान पर ज्ञान आधारित समाज के निर्माण का विचार पत्र ●

वर्ष 1, अंक 6, कुल पृष्ठ : 8 | 5 अक्टूबर 2011 | सहयोग राशि : 5 रुपये

नई शुरुआत
किसान आंदोलन समन्वय समिति की बैठक

अमरावती, 22-23 सितंबर 2011

अमरावती (महाराष्ट्र) में किसान आंदोलनों की अखिल भारतीय समन्वय समिति की बैठक में आये विभिन्न राज्यों के किसान नेता

22 सितंबर 2011 को अमरावती (महाराष्ट्र) में किसान आंदोलन की अखिल भारतीय समन्वय समिति की बैठक हुई, जिसमें उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हरियाणा, दिल्ली, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के प्रतिनिधि शामिल हुए। बैठक में किसानों की दशा, सरकार की नीतियों और किसान आंदोलन की दिशा पर विस्तृत चर्चा हुई। बैठक की अध्यक्षता किसान आंदोलन के वरिष्ठ नेता व चिन्तक श्री विजय जावंधिया ने की।

इस बैठक में सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया।

देशभर में व्यापक किसान संगठनों और किसान आंदोलनों का उद्देश्य है ग्राम समाज की खुशहाली हासिल करना और उसके आधार पर अपने देश को खुशहाल बनाना। निम्नलिखित मांगों को लेकर पूरे देश के स्तर पर किसानों को एकजुट करने और सरकारों पर सही नीतियों के लिए दबाव बनाने के अभियान चलाये जायेंगे।

1. **किसानी लाभकारी हो।**
   - कृषि उत्पाद का न्यायसंगत दाम मिले।
   - बिजली, पानी, खाद, बीज की पक्की व्यवस्थाएं हों।
   - असिंचित खेती के किसानों को प्रति एकड़ सालाना आर्थिक सहायता दी जाय।
   - स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू किया जाये।
2. **राष्ट्रीय संसाधनों का बराबर बंटवारा हो।**
   खेती और उद्योग तथा गांव और शहर के बीच बिजली, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा की उपलब्धता में कोई गैरबराबरी न हो।
3. **कृषि सम्बन्धित विषय जो विभिन्न मंत्रालयों में बिखरे हुए हैं, उन्हें एक मंत्रीमंडल स्तरीय समिति के अंतर्गत एकजुट किया जाय।**
4. **भूमि अधिग्रहण अपने वर्तमान रूप में हमें अमान्य है।** सर्वमान्य मसौदा बनाने के लिए प्रभावित समाजों (किसान व आदिवासी) के आंदोलनों और सरकार की संयुक्त समिति बनायी जाये।
5. **मनरेगा का विस्तार किया जाय।**
   - बुवाई से कटाई तक के सभी कृषि कार्यों में इस्तेमाल होने वाले किसान और उसके परिवार तथा खेतिहर मजदूरों के श्रम मनरेगा में शामिल किये जायें।
   - मनरेगा का पारिश्रमिक सरकारी कर्मचारी के न्यूनतम वेतन यानि रुपये 500/- प्रति दिन दर से कम न हो।
6. किसान आंदोलनों की यह समन्वय समिति 23 सितंबर से शुरू होने वाले महाराष्ट्र के किसानों के 'डेरा आंदोलन' को अपना पूरा समर्थन देती है।
7. उपरोक्त मांगें 18 अक्टूबर की दिल्ली की प्रस्तावित किसान रैली की मांगों में शामिल की जायें।
8. अखिल भारतीय किसान आंदोलन समन्वय समिति की अगली बैठक 13-14 नवंबर 2011 को वाराणसी में होगी।

इस बैठक में उपस्थित उल्लेखनीय नाम : विजय जावंधिया (शेतकरी संघटना, महाराष्ट्र), राकेश टिकैत (भारतीय किसान यूनियन, उत्तर प्रदेश), बच्चू कडु ('डेरा आंदोलन', अमरावती), सुनील सहस्त्रबुद्धे (विद्या आश्रम, वाराणसी), सेला मुथु (तमिलनाडु किसान संगठन), नेल्ला गाउण्ड (तमिलनाडु), गुरुनाम सिंह (भारतीय किसान यूनियन, हरियाणा), विजय शास्त्री (भारतीय किसान यूनियन, उत्तराखंड), राजपाल शर्मा, दीवान चंद, घनश्याम वर्मा (सभी भारतीय किसान यूनियन, उत्तर प्रदेश), रजिन्दर सिंह (भारतीय किसान यूनियन, दिल्ली), हरनाम सिंह (भारतीय किसान यूनियन, लखनऊ), निरूप रेड्डी (एडवोकेट, तेलंगाना), मुरलिंगप्पा पाटिल (रैयत संघ, कर्नाटक), डॉ. चित्रा सहस्त्रबुद्धे (लोकविद्या पंचायत, वाराणसी), चन्द्रकांत वानखेडे (वरिष्ठ पत्रकार, महाराष्ट्र), डॉ. मधुकर गुमले (किसान मित्र, अमरावती), डॉ. गिरीश सहस्त्रबुद्धे (विद्या आश्रम, नागपुर), सुभाष तम्बोली (शेतकरी संघटना, पुणे), तेजस्विनी (पत्रकार, पुणे), संजय देशमुख (प्रहार, अमरावती), मधुकर सनत (एक्शन एड, मुम्बई)।

●

वाराणसी मंडल पंचायत के निर्णय

भुपौली, 27 अगस्त, 2011

समाज को बदहाली से निजात मिलने के लिये यह जरूरी है कि सभी को काम मिले। समाज का विकास समाज के हर आदमी और औरत की भागीदारी के साथ ही संभव है। सभी के ज्ञान और श्रम के इस्तेमाल से ही सबकी खुशहाली का रास्ता बनता है। ग्रामीण समाज आगे बढ़े और खुशहाल हो इसके लिए निम्नलिखित मांगों पर अमल होना जरूरी है।

1. **सबको नौकरी मिले।**
   - जिसको जो आता है उसके बल पर उसे पक्की नौकरी मिले।
   - किसानी, कारीगरी, पशुपालन, बागवानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार, छोटी दुकानदारी, मरम्मत के काम, मोटा काम, सभी क्षेत्रों में पक्की नोकरी मिले।
   - मनरेगा को विस्तार दें। नये क्षेत्र और पक्की नौकरी को शामिल किया जाय। वेतन में बढ़ोत्तरी हो।
   - हर परिवार में एक नौकरी हो।
   - न्यूनतम वेतन वही हो जो सरकारी नौकरी में होता है।
   - हर गांव में रोजगार दफ्तर हो।
2. **किसानी लाभकारी हो।**
   - उत्पादन को जायज मूल्य मिले।
   - बिजली, पानी, खाद, बीज इत्यादि की पक्की व्यवस्थाएं हों।
   - असिंचित भूमि के किसानों को सब्सिडी दी जाये।
3. **जमीनों का अधिग्रहण बंद हो।**
4. **राष्ट्रीय संसाधनों का बराबर का बंटवारा हो।**
   - बिजली का बंटवारा कृषि और उद्योगों में तथा गांव, शहर, महानगर, सभी में बराबर का हो।
   - शिक्षा, स्वास्थ्य-सेवा, वित्त आदि राष्ट्रीय संसाधनों की उपलब्धता सभी के लिये बराबर की हो।
5. **गांव-गांव तक फैला भ्रष्टाचार समाप्त हो।**
   - भ्रष्टाचार के निवारण की सरकारी-न्यायिक व्यवस्था गांव के स्तर तक हो।
   - लोकपाल के अंतर्गत ग्रामपाल की व्यवस्था हो।
   - इसके लिए गांव के सबसे सद्भाव रखने वाले, संत स्वभाव के व्यक्तियों का सहारा लिया जाये।

●

डेरा आंदोलन

हजारों-हजार किसानों की आत्महत्याओं से त्रस्त विदर्भ के किसान समाज ने अब हुंकार भरी है। अमरावती के निर्दल विधायक बच्चू कडू के नेतृत्व में महाराष्ट्र के किसानों ने अपने संगठन और आंदोलन की शुरुआत कर दी है। 'मरेंगे नहीं, लड़ेंगे' के नारे पर एकजुट बीस हजार किसानों की रैली में 23 सितंबर 2011 को अमरावती में बच्चू कडू ने 'डेरा आंदोलन' का ऐलान किया। विजय जावंधिया, चन्द्रकांत वानखेड़े, राकेश सिंह टिकैत, गुरनाम सिंह, सुनील सहस्त्रबुद्धे, निरुप रेड्डी व सेला मुथ्थु जैसे विभिन्न प्रदेशों से आये किसान नेताओं ने रैली को सम्बोधित किया। शाम को अपनी मांगें मनवाने के लिए सैकड़ों किसानों ने गाड़ियों में भरकर 1100 किलोमीटर दूर सातारा जिले में स्थित मुख्यमंत्री के गांव के लिए कूच कर दिया। बीच में कई स्थानों पर रुकते हुए और रैलियां सम्बोधित करते हुए यह हुजूम जब 26 सितंबर को पुणे के पास देहू में पड़ाव कर रहा था तब महाराष्ट्र की सशस्त्र पुलिस ने चारों तरफ से घेरा डाल दिया। बच्चू कडू अपने सैकड़ों समर्थकों के साथ निवास की तीसरी मंजिल की छत पर चढ़ गये और ऐलान करके कहा कि वे नीचे तभी आयेंगे जब सशस्त्र पुलिस हटेगी। अगले दिन मुख्यमंत्री ने किसान नेताओं के साथ खुद आकर वार्ता की और अधिकांश मांगों को क्रियान्वयन में लाने का आश्वासन दिया। आंदोलन 5 महीने के लिए स्थगित कर दिया गया है और यदि सरकार ने अपने आश्वासन का मान न रखा तो फिर आंदोलन जारी रहेगा। इस आंदोलन की प्रमुख मांगें हैं—मनरेगा में किसानों के श्रम को शामिल करना, कृषि उत्पाद को न्यूनतम समर्थन मूल्य देना, किसानों के लिये उचित आवास की व्यवस्था और विदर्भ में परियोजनाओं से विस्थापित किसानों के पुनर्वास के अधूरे काम पूरे करना।

डेरा आंदोलन में आये किसानों को सम्बोधित करते हुए वरिष्ठ किसान नेता विजय जावंधिया

●

इस अंक के बारे में

केन्द्रीय सरकार ने भूमि अधिग्रहण पर एक नये कानून का मसौदा बनाया है। इस मसौदे पर देश के प्रमुख किसान संगठनों और सामाजिक संगठनों ने अपनी स्पष्ट असहमति व्यक्त की है। लोकविद्या पंचायत के इस अंक में इन संगठनों द्वारा दिये गये सार्वजनिक वक्तव्यों को प्रमुख स्थान दिया गया है। विद्याआश्रम के हैदराबाद, पुणे एवं वाराणसी के कार्यकर्त्ताओं के बीच इस विषय पर चली गंभीर बहस के कुछ अंशों को भी इस अंक में स्थान दिया गया है। –सम्पादक

भूमि अधिग्रहण विधेयक पर भारतीय किसान यूनियन के सुझाव

[भारतीय किसान यूनियन द्वारा भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन विधेयक 2011 के सम्बन्ध में केन्द्रीय मंत्री (ग्रामीण विकास मंत्रालय) जयराम रमेश को लिखे पत्र का संक्षिप्त अनुवाद नीचे दिया जा रहा है। –सम्पादक]

हम भारतीय किसान यूनियन (अराजनैतिक) आपको भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन विधेयक 2011 के लिए समयानुरूप मसौदा तैयार करने के लिए बधाई देना चाहते हैं। हम आपका इसलिए भी धन्यवाद देते हैं कि आपने एक समग्र विधेयक तैयार किया है, जिसमें पुनर्वास एवं पुनर्स्थापना की व्यवस्था शामिल है तथा जिसमें किसानों और भूमि अधिग्रहण से जिनकी जीविका प्रभावित होने वाली हो, उन सभी व्यक्तियों की चिन्ताओं का खयाल रखा है।

लेकिन हमें किसान होने के नाते इस बात से निराशा हुई है कि यह विधेयक खाद्य सुरक्षा और खाद्य संकट और अत्यधिक महंगाई के बावजूद आम लोगों को खाना मिले इसे पूरी तरह अनदेखा करते हुए केवल औद्योगीकरण के लिए भूमि अधिग्रहण की मंशा से बनाया गया है। हालांकि विधेयक में बहुफसली सींचित जमीन को अधिग्रहण से बचाने की व्यवस्था है लेकिन देशभर में बड़े पैमाने पर कृषि भूमि के इतर कार्यों में हो रहे इस्तेमाल और इससे देश की खाद्य सुरक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव की चुनौतियों का सामना नहीं किया गया है।

चूंकि आपने प्रस्तावित विधेयक पर टिप्पणी मांगी हैं हम निम्नलिखित बातें आपके सामने रखना चाहते हैं :

1. हम इस बात से बेहद निराश हैं कि इस प्रस्ताव के अनुसार ग्रामीण इलाके में मुआवजे की राशि 'बाजार मूल्य' के छः गुना होगी जबकि शहरी क्षेत्रों में यह 'बाजार मूल्य' से कम-से-कम दुगनी होगी। चूंकि प्रस्ताव में 'बाजार मूल्य' तय करने का तरीका पिछले तीन वर्षों में लेन-देन के उस मूल्य का औसत होगा जो पंजीकरण में दर्ज है इसलिए इस तरीके से भूमिधरों को उनकी भूमि का वास्तविक मूल्य कभी नहीं मिल सकेगा। यह सब जानते हैं कि पंजीकरण में दर्ज मूल्य वास्तविक लेन-देन के मूल्य से बहुत कम होता है। इसलिए बाजार मूल्य उस वक्त चल रही जमीन की कीमत होना चाहिए। **हम यह मांग करते हैं कि भूमि अधिग्रहण में न्यूनतम मुआवजा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचलित वास्तविक मूल्य का 25 गुना और शहरी क्षेत्रों में 10 गुना होना चाहए।**

2. दूसरी बात यह है कि कृषि भूमि जब व्यावसायिक हो जाती है तो उसका मूल्य कई गुना बढ़ जाता है। इसलिए भूमि के उपयोग में बदलाव के चलते अगले 33 सालों में जो दामों में बढ़ोत्तरी अपेक्षित है, इसका हिसाब भी मुआवजे में शामिल किया जाना चाहिए। और विधेयक में पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन की जो व्यवस्थाएं हैं वे जिसके नाम जमीन है केवल उसके परिवार को लागू होती हैं जबकि ऐसे हर परिवार में एक से अधिक वयस्क सदस्य हो सकते हैं जो सब उसी भूमि पर अपनी जीविका के लिए निर्भर हैं। यह विधेयक ग्रामीण भारत में प्रचलित संयुक्त परिवार की पहचान नहीं करता है जिसमें पुत्र और पौत्र सभी जीविका के लिए पारिवारिक भूमि पर निर्भर होते हैं। **इसलिए हम मांग करते हैं कि जमीन के मालिक के का लाभ मिलना परिवार के हर वयस्क सदस्य को पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन की व्यवस्थाओं का लाभ मिलना चाहिए तथा प्रभावित परिवार के हर सदस्य के लिए नौकरी की अनिवार्य व्यवस्था होनी चाहिए। इसका स्थान एक बार में दिया 2 लाख रुपया कभी नहीं ले सकता।**

हम इस बात पर जोर देना चाहते हैं कि जिन लोगों की जीविका छिनती है (इसमें भूमिहीन सम्मिलित हैं) उनके परिवार के हर वयस्क सदस्य के लिए नौकरी की गारंटी होनी चाहिए।

इस देश के करोड़ों छोटे और मध्यम किसान जिनकी जीविका का एकमात्र साधन उनकी एक छोटी-सी जमीन है, जिस पर औद्योगीकरण के लिए अधिग्रहित हो जाने का खतरा मंडरा रहा है, इन किसानों के हितों को सामने रखते हुए आप और आपका मंत्रालय भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास व पुनर्स्थापन 2011 के प्रस्तावित विधेयक में ये अति महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करेंगे, ऐसी आशा हम रखते हैं।

•

भूमि अधिग्रहण कानून पर दक्षिण भारत के किसान संगठनों की मांग

[तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल के किसान संगठनों ने एक किसान आंदोलनों की दक्षिण भारत की समन्वय समिति बनायी है, जिसने भूमि अधिग्रहण के बहुचर्चित वर्तमान विधेयक पर अपनी राय और अपने विचार भारत सरकार को 31 अगस्त को एक पत्र के मार्फत भेजे। उसी पत्र का सार संक्षेप नीचे दिया जा रहा है। –सम्पादक]

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा तैयार राष्ट्रीय भूमि अधिग्रहण तथा पुनर्वास व पुनर्स्थापन विधेयक 2011 पूरी तरह से उद्योगों के लिए जमीनों और संसाधनों पर कब्जा करने का प्रस्तावित दमनकारी कानून है। किसान समुदाय इसे पारित करने की हर जल्दबाजी का विरोध करता है। हम नहीं मानते कि जिन्दगी जीने के हमारे तरीके को भारत के भविष्य में कोई स्थान नहीं है। उल्टे इस तरह के औद्योगीकरण और शहरीकरण ने पर्यावरण, जलवायु, जीविका, खाद्यान्न, सभी क्षेत्रों में गम्भीर संकट पैदा कर दिये हैं।

हम भूमि अधिग्रहण विधेयक को इसके वर्तमान रूप में पूरी तरह नकारते हैं, जिसके निम्नलिखित कारण हैं :

1. हम विधेयक के आधारभूत विचार का विरोध करते हैं। सार्वजनिक उद्देश्य की इसकी परिभाषा हमें सर्वथा अमान्य है। भारत की खाद्यान्न सम्प्रभुता पक्की करने में किसान समुदाय की भूमिका मौलिक है। इसलिए हम मांग करते हैं कि सार्वजनिक उद्देश्य की परिभाषा किसानों और ग्रामीण समुदायों के साथ विस्तृत चर्चा पर आधारित होनी चाहिए।
2. कृषि योग्य भूमि को निजी उद्योगों के लिए दिया जाना हमें सर्वथा अमान्य है। भूमि क्रय-विक्रय की वस्तु नहीं है। भूमि हमारी पहचान है, हमारी जड़ें इसमें हैं। इस सिलसिले में सिंचित और असिंचित भूमि का अंतर हम नहीं मानते। विधेयक केवल बहुफसली जमीनों को बख्शता है जो अधिकांश धनी किसानों के पास होती हैं। सभी कृषि योग्य भूमि कृषि के लिए ही होनी चाहिए।
3. न्यूनतम विस्थापन की बात विधेयक में नहीं है। अस्सी प्रतिशत किसानों की सहमति की बात केवल निजी व सरकारी संयुक्त परियोजनाओं के लिए की गयी है, सरकारी परियोजनाओं के लिए नहीं। जबर्दस्ती विस्थापन नहीं किया जायेगा यह कहीं नहीं कहा गया है। अस्सी प्रतिशत सहमति की प्रक्रिया स्पष्ट होनी चाहिए और सभी परियोजनाओं को लागू होनी चाहिए।
4. निजी कम्पनियों द्वारा जमीन खरीदने में धोखाधड़ी से किसानों को बचाने के लिए कोई तंत्र नहीं बनाया गया है। भू-माफिया के मार्फत गरीब किसानों को डराने-धमकाने से उन्हें बचाने की व्यवस्था अति आवश्यक है।
5. इसकी कोई गारंटी नहीं दी गयी है कि जमीन लेने से पहले मुआवजे का भुगतान तथा पुनर्वास व पुनर्स्थापन पूरा किया जाएगा। कलक्टर के हाथ में सारा कार्यान्वयन केन्द्रित है और यदि शिकायत हो तो किसानों को उसी के पास जाना है। किसानों की स्थिति मजबूत करने की जगह उन्हें नौकरशाही की मर्जी पर छोड़ दिया गया है। इतिहास गवाह है कि इस नौकरशाही ने लोगों के हितों के विरुद्ध हमेशा ही उद्योगों के हितों की सेवा की है।
6. आदिवासियों, वनवासियों और ग्रामसभाओं की फैसले लेने में भूमिका पर खोखली बातें की गयी हैं। यह कैसे हो सकता है कि वन अधिकार कानून को दरकिनार कर दिया जाय, परियोजनाओं के लिए वनवासियों और आदिवासियों से कोई सहमति न ली जाये और उनपर जबर्दस्ती पुनर्वास व पुनर्स्थापन की एक योजना थोप दी जाय। ग्रामसभाओं के पास भी परियोजनाओं को रोकने के कोई अधिकार नहीं छोड़े गये हैं।
7. पुनर्वास पैकेज अधूरे हैं। यह केवल 100 एकड़ से अधिक को ही लागू होता है। एक एकड़ भी लिया जाय तो पुनर्वास लागू होना चाहिए। ग्रामसभा की जमीनों या सरकारी जमीनों के अधिग्रहण से प्रभावित लोगों को भी पुनर्वास व पुनर्स्थापन की व्यवस्थाएं मिलनी चाहिए। अगर सौ से कम परिवार पुनर्स्थापित हो रहे हैं तो उन्हें बुनियादी ढांचे से महरूम क्यों रखा गया है?
8. सामाजिक प्रभाव का मूल्यांकन खोखला है। इस मूल्यांकन का कार्य सरकार को ही दिया गया है, किसी स्वतंत्र विशेषज्ञ समिति को नहीं। ग्रामसभाएं इस मूल्यांकन में भाग ले ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। और फिर इस मूल्यांकन पर अधिग्रहण निर्भर करेगा ऐसा कहीं कहा भी नहीं गया है।
9. अन्यायी अनुशासनात्मक व्यवस्थाएं/विधेयक के अनुसार गलत काम करने वाले अफसरों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाएगी जबकि भूमि अधिग्रहण में बाधा बनने वालों के लिए जुर्माने और जेल की व्यवस्था है।

हमारी मांगे : हम मांग करते हैं कि

- 1894 के काले और दमनात्मक भूमि अधिग्रहण कानून के स्थान पर हम एक नये विधेयक की मांग करते हैं और ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित वर्तमान विधेयक को अस्वीकार करते हैं। किसान आंदोलनों और जन-आंदोलनों पर ध्यान देते हुए मंत्रालय एक सर्वथा नया विधेयक पेश करे।
- भारत सरकार किसान आंदोलनों के प्रतिनिधियों को शामिल करके एक समिति बनाए जो सरकार के लिए जमीनों की जरूरत और पुनर्वास व पुनर्स्थापन का एक विधेयक तैयार करे।
- तहसील स्तर से शुरू करके राष्ट्रीय स्तर तक बहस कराकर सार्वजनिक उद्देश्य की मार्गदर्शिका तैयार की जाये। इस मार्गदर्शिका को लागू करके सार्वजनिक उद्देय तय किया जाये और लोगों को सारी बातें बताकर उनकी सहमति लेकर तभी जमीनें ली जाये जब सरकार ढंग का मुआवजा, पुनर्वास व पुनर्स्थापन की बाजार दामों से ऊपर की व्यवस्था दे। परियोजना से प्रभावित लोगों को तथा ग्रामसभाओं को परियोजनाएं रोकने का अधिकार होना चाहिए यदि कार्यान्वयन में गड़बड़ियां पायी जायें या फिर सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन ऐसी सिफारिश करें।
- नये विधेयक को सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध कराया जाए जिससे जमीनी स्तर तक बहसें चलायी जा सकें। सरकार किसानों व सभी ग्रामीण समुदायों के बीच आम सहमति के लिए समय-सीमा निर्धारित करे।
- पिछले साठ वर्षों में औद्योगिक उद्देश्यों को लेकर अधिग्रहित भूमि तथा उसके वास्तव में किए गए उपयोग पर सरकार विस्तृत तथ्यों का प्रकाशन करे।
- अंत में, जब तक नया कानून नहीं बन जाता, 1894 के राक्षसी भूमि अधिग्रहण कानून के अंतर्गत हो रहे अधिग्रहण को पूरी तरह स्थगित रखा जाय।

कर्नाटक राज्य रेयतु संघ (कर्नाटक), तमिलग विवसाइगल संगम् (तमिलनाडु), उझवार उलइप्पलार कच्ची (तमिलनाडु), उझवार पेरियक्कम (तमिलनाडु), कच्ची सरपर्त्र तमिलग विवसाइगल संगम् (तमिलनाडु), फोंगुनाडु विवसाइगल संगम् (तमिलनाडु), केरल कोकोनट फार्मर्स असोसिएशन (केरल), आदिवासी गोत्र महासभा (केरल)।

•

नई दास व्यवस्था

विस्थापन को आजादी के समय से ही ***विकास*** की कीमत के रूप में पेश किया गया। हुआ यह कि इस ***विकास*** की सारी कीमत लोकविद्याधर समाज ने चुकाई और सारा फायदा पूँजीपतियों, अफसरों, नेताओं, ठेकेदारों और बड़ी–बड़ी तनख्वाहों की नौकरी करने वालों को मिला।

सूचना युग में अब जो ***विकास*** के नाम पर हो रहा है उसके सामने नीचे दिये गये लक्ष्य दिखाई देते हैं–

1. अमीरों की नई दुनिया का निर्माण

दुनिया भर के अमीर अपने लिये एक राजसी और विलासी दुनिया बना रहे हैं, जिसके तहत वे कुछ व्यवस्थायें बना रहे हैं। इनमें मुख्य हैं–

- सारी सुख सुविधाओं से सम्पन्न रिहायशी इलाके, जो भरपूर बिजली, पानी, खेलने के मैदान, सुरक्षा आदि से सम्पन्न हों।
- अलग किस्म के मॉल बाजार, जिनमें बहुत बड़ी–बड़ी व अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियों के ठप्पे वाला कपड़ा, जूता, खाना और इलेक्ट्रानिक सामान आदि मिलता हो।
- आवागमन, घूमने–फिरने व मनोरंजन के विशेष साधन व स्थान, जैसे आलीशान हवाई अड्डे, तरह–तरह की मोटर गाडियाँ, बड़े–चौड़े राजमार्ग, नये–नये होटल, मॉल के सिनेमाघर, कम्प्यूटर पर संगीत–सिनेमा–गेम, पर्यटन के स्थान, विशेष सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेल आदि।
- उच्च शिक्षा के बहुत महँगे संस्थान, अत्यधिक महँगे कारपोरेट अस्पताल।
- कम्प्यूटर–इंटरनेट व्यवस्था, जो दुनियाभर में फैले इन लोगों के बीच सम्पर्क–संचार का इंतजाम देती है और जिसके जरिये वे प्रशासन, बाजार, मीडिया, शिक्षा, अनुसंधान, मनोरंजन आदि की कमान अपने हाथ में रखने लगे हैं।
- इस सबके लिये आवश्यक संसाधनों, जैसे ज्ञान, वित्त, भूमि, वन, जलस्रोत, बिजली, कृषि उत्पादन, उद्योग, आदि पर वे कब्जा कर रहे हैं।

2. लोकविद्याधर समाज को दास बनाना

अमीरों की यह नई दुनिया बेहद महंगी है और इसकी सारी कीमत चुकाने के लिये लोकविद्याधर समाज (आदिवासी, किसान, कारीगर, छोटे व पटरी के दुकानदार, झुग्गी–झोपड़ी के निवासी, महिलाओं) पर खुली हिंसा और जबर्दस्ती की जा रही है–

- विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत नई बाजार व्यवस्था लोकविद्याधर समाज पर लादी जा रही है। उन्हें अपने ज्ञान, श्रम और उत्पादन को सस्ते से सस्ता बेचने के लिये मजबूर किया जा रहा है।
- विस्थापन नीति द्वारा लोकविद्याधर समाज को सारे राष्ट्रीय, प्राकृतिक और निजी संसाधनों से बेदखल किया जा रहा है। इन सभी संसाधनों पर अमीर वर्गों को कब्जा दिलाया जा रहा है।

•

लोकविद्याधर समाज के चार बड़े दुःख

1. **लोकविद्या यानि उनके ज्ञान को ज्ञान ही नहीं माना जाता।**
2. **आज का बाजार उनके श्रम और ज्ञान का जायज मूल्य नहीं देता।**
3. **राष्ट्रीय संसाधनों जैसे बिजली, पानी, शिक्षा, वित्त आदि का सबसे छोटा हिस्सा इन्हें दिया जाता है।**
4. **इन्हें इनके जीवन यापन के कार्यों, संसाधनों और रहने के स्थानों से लगातार विस्थापित किया जा रहा है।**

भूमि अधिग्रहण नहीं भू अधिकार चाहिए

जनआंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वय

देशभर के ग्रामीण, आदिवासी इलाकों में, शहर की बस्तियों में, आज विस्थापन विरोधी आवाज तेज हो रही है। तथाकथित विकास, औद्योगिकीकरण, सार्वजनिक हित के नाम पर बांधों, नये पोर्ट या शहर, खदानों, जंगलों का आरक्षण या राष्ट्रीय उद्यान व सेंच्यूरी, कारखानों, सेज आदि से लाखों को उजाड़कर, पहले ही उजड़े लोगों को भी पुनर्वासित न करते हुए जो 'लाभ' निकल रहे हैं, वे अधिकांश पूंजीपतियों, सत्ताधीशों को ही मिलने वाले हैं। विस्थापन से समता-न्यायवादी परिवर्तन के बदले, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और गरीबों से लूट, गैर-बराबरी और पूंजी-बाजार के कब्जे बढ़ रहे हैं। विकास नियोजन में स्थानीय इकाई—ग्रामसभा हो या वार्डसभा—का स्थान, सम्मान व सहभागिता खत्म होती जा रही है। पीढ़ियों की जमीन, जंगल, पानी और जीवन प्रणाली छीनने वाली राह पर संवैधानिक अधिकारों को कुचलने के लिए, नये कानूनों का सहारा लिया जा रहा है।

1998 में जब श्री बाबागौडा पाटील ग्रामीण विकास मंत्रालय के मंत्री थे तब मंत्रालय के सामने 'जनआंदोलनों का राष्ट्रीय समन्वय' के नेतृत्व में **'ग्रामसभा स्तर पर विकास योजना बने और कोई अनचाहा विस्थापन ना हो'** का विषय उठाया गया था। जिसके बाद यह विषय विभिन्न स्तरों पर जो कि आज 'राष्ट्रीय विकास, विस्थापन और पुनर्वास' बिल के रूप में सामने आया है।

सन् 2000 से जनआंदोलन सफलतापूर्वक कलिंगनगर, नियमागिरी, सिंगुर, नंदीग्राम, सोमपेटा, चंद्रपुर, नर्मदा घाटी, गंगा घाटी, जगतपुर, मुम्बई, ग्रेटर नोएडा और अन्य हजारों जगहों पर भूमि लूट के खिलाफ खड़े हुए हैं। आदिवासी, महिला, दलित, किसान, कामगार, भूमिहीन मजदूर और अन्य सभी अपने भूमि अधिकार के लिए संघर्षरत हैं। इन सभी ने अपने प्राणों की आहुति अपने प्राकृतिक संसाधनों जो कि उनकी आजीविका के साधन हैं, की रक्षा के लिए दी है। **इस भूमि रक्षा आंदोलनों में अनेकों शहीद हुए हैं। ये सूची बहुत लंबी है।** साथ ही सदियों से जंगलों में रह रहे वनवासी भी अपने भूमि-आजीविका अधिकार के लिए लड़ रहे हैं। बावजूद इसके की 2006 में सरकार ने वनाधिकार कानून भी बनाया पर उसका लाभ भी वनवासियों को नहीं मिल पाया।

1979 में नर्मदा जल विवाद प्राधिकरण ने परियोजना प्रभावितों के लिए **भूमि के बदले भूमि** की नीति को माना, जो कि बाद में मध्य प्रदेश की 1987 में बनी पुनर्वास व पुनर्स्थापना नीति का आधार बनी और बाद में बनी अनेक सरकारी एजेंसियों व आंदोलन समूहों की नीतियों के ड्राफ्ट में भी आयी। इस नीति के पालन के लिए भी लोगों को संघर्ष करना पड़ा है।लगभग तीन दशकों के बाद जब तथाकथित विकास योजनाओं के लिये पूरे देश में अनचाहे विस्थापन—भूमि लूट की खिलाफत तेजी से सामने आयी हैं, व्यवसायिक घरानों की कोशिश हो रही है कि **भूमि के बदले मात्र पैसा** दे दिया जाए। पर संघर्ष तो भूमिरक्षण का है। पुराने लाखों विस्थापितों के लिए तो भूमि नहीं है फिर नये विस्थापन की बात करना शर्म की ही बात है।

इस स्थिति में सरकार ने जो नया बिल चालू संसद सत्र में सांसदों के सामने रखा है वह विस्थापन और भू-अर्जन को तेज गति से आगे बढ़ाएगा, न कि विस्थापन को कम करेगा। नया बिल, हर तरह के निजी हितों को भी लोक हित में ही सम्मिलित करने जा रहा है। किसी भी काम को लोक हित के दायरे में लाना और भू-अर्जन कंपनियों के लिए भी करना और **वह भी आपातकालीन धारा लगाकर,** इस बात से आज से और अधिक अन्याय बरसेगा, यह निश्चित है। साथ ही यह बिल, अन्य किसी कानून जो आदिवासी, वनवासियों व दलितों के हितों को स्वीकारता है, को नहीं मानता है। शहरी गरीबों के हितों को भी नहीं देखा गया है। जबकि आज बिल्डर माफिया ने शहरों में गरीबों को जमीनों से बेदखली का भयानक दौर चालू कर रखा है। विस्थापितों को अधिकार के नाम पर केवल नकद मुआवजा देना, वैकल्पिक जमीन या जीविका देने की बात को नकारती है।

यह एक स्वागत योग्य कदम है कि नये ग्रामीण विकास मंत्री श्री जयराम रमेश ने दो विधेयकों (प्रस्तावित भू-अर्जन (संशोधन) और पुनर्वास/पुनर्स्थापना राष्ट्रीय कानून) के स्थान पर एक नया संपूर्ण कानून बनाया है। किन्तु यह इतनी जल्दी में क्यों किया जा रहा है यह प्रश्न है? बिल पर प्रतिक्रियाएं मांगने का समय 30 दिन रखा गया। सरकार ने देश भर में कोई चर्चा का आयोजन नहीं किया। आंदोलनों ने प्रतिक्रिया देने की समय सीमा बढ़ाने की मांग भी की पर समय सीमा भी नहीं बढ़ायी गयी और तुरंत ही चार दिन के भीतर जो भी प्रतिक्रियाएं आयी थीं उन्हें देखकर संशोधन भी कर दिया गया। संसद में प्रस्तुत यह ताजा बिल आदिवासी और सीमांत किसानों की जमीनों के भू-अर्जन, कृषि विवादों, भूमि विवादों को बढ़ाने, देश को दरिद्र करने वाला ही साबित होगा। यह नहीं भूलना चाहिए कि प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में भी देखने की जरूरत है।

हमने देशभर के संगठनों के साथ मिलकर सरकार से मांग की है कि संविधान के अनुच्छेद 24, पेसा 1996 और वन अधिकार कानून 2006 के आधार पर एक विकेन्द्रित विकास नियोजन कानून बने और सरकार तुरन्त **एक संपूर्ण राष्ट्रीय विकास नियोजन, विस्थापन और पुनर्वास बिल** लाया जाए। जो इच्छा विरुद्ध विस्थापन को रोके। जिसमें ग्रामीण विकास पर स्थाई समिति (2007-08) के प्रगतिशील तत्त्वों को, न्यूनतम विस्थापन, न्यायपूर्ण पुनर्वास और संविधान के अनुच्छेद 243, पेसा 1996 और वन अधिकार कानून 2006 के सिद्धांत पर आधारित एक विकेन्द्रित विकास नियोजन कानून बने। **जिसके पहले प्रभावित समुदायों, आंदोलन समूहों और किसान समूहों के साथ चर्चा हो। इस बिल में :**

- लोक प्रयोजन सिर्फ, अत्यन्त जरूरी सरकारी कामों के लिए हो जिसमें जनता का पैसा लगता हो। निजी निगमों के लिए बिल्कुल भी न हो। जबरन भू-अर्जन पर पाबंदी हो। निजी हित की कोई भी परियोजना लोक हित की परिभाषा में शामिल न हो। वरना यह करोड़ों लोगों के साथ अन्याय करेगा।
- यदि बाजार आधारित भूमि या अन्य संसाधनों की, बिल्डर सहित निजी हितों द्वारा खरीद हो तो भी राज्य की जिम्मेदारी है कि वो संसाधनों व प्रत्येक परिवार खास करके उपेक्षितों की आजीविका को ध्यान में रखकर बाजार मूल्य तय करें। सरकारी व निजी निगम इस पुनर्वास/पुनर्स्थापन को मानने लिए बाध्य हो। जिसमें बाजार का न्याय व प्रतियोगितापूर्णता का सिद्धांत भी रहे।
- प्रत्येक प्रभावित परिवार किसी भी तरह से पुनर्वास/पुनर्स्थापन के लाभों से वंचित न हो।
- भूमि के बदले बाजार मूल्य की सोच को ही नकारना है। इसके बुरे नतीजे आदिवासियों और दलितों को ही भुगतने पड़ते हैं। इसलिए बिना किसी हिचकिचाहट के प्रभावितों के लिए आजीविका का विकल्प या निश्चित रोजगार होना ही चाहिए।
- बिल में से आपातकालीन धारा, जिसे सर्वोच्च न्यायालय के अनेकों आदेशों में चुनौती दी गयी है, हटानी चाहिए। इसे मात्र युद्ध के समय रक्षा कार्यों या प्राकृतिक आपदा के समय ही इस्तेमाल करने तक सीमित किया जाए।

... शेष पृष्ठ 8 पर

महिला वनाधिकार एक्शन कमेटी

रांची प्रस्ताव

14-15 सितंबर 2011 को वनों के मामले में महत्त्वपूर्ण राज्य झारखंड की राजधानी रांची स्थित सोशल डेवलप सेंटर में 'महिला, आजीविका व सामुदायिक अधिकार' के विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय परिसंवाद महिला वनाधिकार एक्शन कमेटी, झारखंड महिला आयोग, श्रमजीवी महिला समिति, सेंट फॉर वर्ल्ड सालीडेरिटी, नेशनल सेंटर फॉर सडवोकेसी स्टडीज, राष्ट्रीय वनजन श्रमजीवी मंच का सफल आयोजन किया गया। इस परिसंवाद में 12 राज्यों से विभिन्न आंदोलनकारी महिला संगठनों व जनसंगठनों के 300 से अधिक की संख्या में महिला व पुरुष प्रतिनिधि साथियों ने भागीदारी की। इस परिसंवाद का मुख्य एजेण्डा 'वनाधिकार के सवाल पर महिलाओं के सामुदायिक वनाधिकार व लघुवनोपज पर उनके अधिकारों को किस तरह से सुनिश्चित किया जाए' रहा। इस परिसंवाद में दो दिन तक चली महत्वपूर्ण गहन चर्चाओं के बाद पारित किए गए प्रस्तावों का संक्षिप्त संस्करण नीचे दिया जा रहा है।

केन्द्र व राज्य सरकारों के समक्ष रखने हेतु।

1. लघुवनोपज के लिए न्यूनतम बाजार मूल्य निर्धारण करने के लिए गठित डॉ. टी. हक कमेटी की रिपोर्ट, जिसमें केन्द्रीय मूल्य निर्धारण आयोग के गठन की सिफारिश की गयी थी, उसे जल्द से जल्द लागू किया जाए।
2. महिलाओं के सभी तरह के वनों पर सामुदायिक अधिकारों व लघुवनोपज पर मालिकाना हक को सुनिश्चित करने के लिए दावों की प्रक्रिया को तेज किया जाए।
3. वनाधिकार कानून को दो हिस्सों में बांटा गया है, जिसमें अनु जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी के बीच में भेदभाव पैदा किया गया है। अन्य परम्परागत समुदाय के लिए 75 वर्ष की सीमा के कारण वनक्षेत्र में लगातार जातीय, साम्प्रदायिक तनाव बढ़ता ही जा रहा है। इसलिए यह प्रावधान तुरंत समाप्त होना चाहिए। समय सीमा दोनों समुदायों के लिए एक ही होनी चाहिए।
4. सभी राज्यों में वनों में उपलब्ध तमाम वनोपज की सूची ग्राम वनाधिकार समितियों को सौंपी जाएं, ताकि उनके जंगल से प्राप्त होने वाली वनोपज पर समुदाय की पहुंच आसानी से हो सके। ग्राम वनाधिकार समितियों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।
5. लघुवनोपज की सूची सभी राज्यों में तैयार की जाए, जिसके ऊपर वनों की एक बहुत बड़ी आबादी खासतौर पर महिलाएं निर्भर करती हैं। वनोपज से वननिगम व बिचौलियों का नियंत्रण हटा वनाश्रित समुदाय का नियंत्रण लागू किया जाए। सूची बनाने के लिए वर्किंग प्लान का भी सहयोग लिया जाना चाहिए।
6. तेंदु-केंदु पत्ता व बांस के ऊपर वन विभाग व राज्य का एकाधिकार खत्म किया जाए।
7. लघु वनोपज के न्यूनतम बाजार मूल्य निर्धारण के कार्य के लिए सामाजिक व श्रम संगठनों जैसे राष्ट्रीय वनजन श्रमजीवी मंच, श्रमजीवी महिला समिति एवं एनटीयूआई जैसे श्रमजीवी संगठनों की मदद ली जानी चाहिए।
8. लघु वनोपज को संग्रह करने के लिए वननिगम व ठेकेदारों की भूमिका को समाप्त किया जाए व हर गांव में संग्रह करने के लिए महिला को-आपरेटिव बनाए जाने चाहिए। महिलाओं को इस विषय में प्रशिक्षण व जानकारी दी जानी चाहिए।
9. वनोपज को एक जगह से दूसरे जगह ले जाने के लिए वनाश्रित समुदाय पर लागू ट्रांजिट परमिट रूल को हटाया जाए। ग्राम वनाधिकार समितियों के सहयोग से नये नियम बनाये जाएं ताकि ठेकेदारों व माफियाओं द्वारा की जा रही वनोपज की लूट को रोका जा सके
10. वनाधिकार कानून के आने के बाद भारतीय वन कानून 1927 का कोई औचित्य नहीं है व चूंकि वनाधिकार कानून की प्रस्तावना में ऐतिहासिक अन्याय को खत्म करने की बात कही गयी है इसलिए जब तक 1927 का कानून रद्द नहीं होगा तब तक ऐतिहासिक अन्याय बरकरार रहेंगे। इसलिए भारतीय वन अधिनियम 1927 को रद्द करके व्यवस्था वनाधिकार कानून की मंशा के अनुरूप समुदायों को सौंपी जानी चाहिए।
11. परम्परागत स्वास्थ्य पद्धति जो कि जंगली जड़ी बूटियों पर आधारित थी इस पद्धति को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए जिससे महिलाओं व वनाश्रित समुदाय के स्वास्थ्य पर समुदाय का नियंत्रण स्थापित हो सके।
12. जड़ी-बूटियों के तहत इलाज करने वाले परंपरागत वैद्यों को प्रोत्साहन व बढ़ावा दिया जाए। महिलाओं को दाई के परम्परागत ज्ञान के तहत प्रशिक्षित किया जाए। इस परम्परागत स्वास्थ्य पद्धति से स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत महिलाओं की बीमारियों की रोकथाम की जाए।
13. जंगल के अंदर बीमारियों की रोकथाम के लिए औषधीय वृक्ष लगाए जाएं न कि विश्वबैंक या जापान आदि के फण्ड के आधार पर व्यापारिक वृक्ष।
14. ग्राम वनाधिकार समितियों का गठन टोला व गांव के स्तर पर किया जाए न कि पंचायत के स्तर पर।
15. जंगल के संरक्षण व संवर्धन की जिम्मेदारी ग्रामसभा को दी जाए

... शेष पृष्ठ 8 पर

नेल्लोर (आन्ध्र प्रदेश) में दो दिन की जन-संसद

17-18 सितम्बर 2011

टी. नारायण राव, हैदराबाद

नेल्लोर जिला पर्यावरण सुरक्षा समिति 18 स्थानीय संगठनों का संगठन है। इसके साथ मिलकर जन आंदोलनों के राष्ट्रीय समन्वय ने 17-18 सितम्बर 2011 को एक दो दिवसीय जन-संसद का आयोजन किया। मुख्य विषय था विस्थापन। नेल्लोर जिले में 29 तापीय बिजली घर बनाने की योजना है जिससे 32,000 मेगा वाट बिजली बनेगी और जिससे वहाँ के लोगों की जिन्दगी और जीविका तथा पूरे क्षेत्र का पर्यावरण पूरी तरह से बरबाद हो जायेगा।

पहले दिन इन बिजली घरों से हो रहे विस्थापन की खिलाफत में चल रहे संघर्षो और देश भर में चल रहे ऐसे ही संघर्षो के साथ संबंध पर चर्चा हुई। जन-संसद के संयोजक बनवारी लाल शर्मा ने अध्यक्षता की। उन्होंने बताया कि यह जन-संसद की चौथी बैठक है। इसके पहले की बैठकें इलाहाबाद (उ0प्र0), चन्द्रपुर (महाराष्ट्र) और अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड) में हो चुकी है। उन्होंने जिन संघर्षो का विशेष जिक्र किया वे हैं; पोस्को द्वारा छीनी जा रही जमीन के विरूद्ध रायपुर से दन्तेवाड़ा शांति व न्याय यात्रा, महाराष्ट्र में जैतापुर नाभिकीय बिजलीघर के खिलाफ तारापुर से जैतापुर की यात्रा, उत्तराखण्ड में भूमि अधिग्रहण के खिलाफ 13 जिलों से गुजरने वाली 11 दिन की यात्रा, नोयडा भूमि अधिग्रहण और भाखड़ा बांध के विस्थापितों का पुनर्वास अभी तक न होने के विरोध में जंतर-मंतर पर रैली। जन संसद में कुण्डाकुलम नाभिकीय बिजलीघर के विरूद्ध चल रहे संघर्ष के प्रति अपना समर्थन व्यक्त किया।

संदीप पाण्डे ने कहा कि भूमि का सम्मान हम अपनी माँ की तरह करते है,सरकार उसकी कीमत कैसे लगा सकती है? भूमि के एवज में भूमि ही मिलनी चाहिए। उन्होंने वर्तमान ऊर्जा नीति की आलोचना की और कहा कि उसी ऊर्जा में हल है जिसके स्रोतों का पुनर्नवीनीकरण होता रहता है।

मेधा पाटकर ने जंगल और जमीन छीने जाने की बात करते हुये कहा कि हमें एक वैकल्पिक भूमि अधिग्रहण पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन विधेयक के लिये संघर्ष करना चाहिए।

विभिन्न स्थानों से आये प्रतिनिधियों ने जीविका, भूमि अधिग्रहण, विस्थापन, पर्यावरण एवं मानवाधिकारों का हनन तथा भ्रष्टाचार पर चर्चा की। इन विषयों पर प्रस्ताव पारित किये गये और यह मांग की गई कि वर्तमान भूमि अधिग्रहण विधेयक के स्थान पर विकास नियोजन, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन विधेयक तैयार किया जाना चाहिए।

हैदराबाद से लोकविद्या जन आंदोलन के प्रतिनिधि के रूप में ललित कौल और नारायण राव ने इस दो दिवसीय जन- संसद में भाग लिया। इन्होंने वहाँ **'विस्थापन रोको'** पुस्तिका के अंग्रेजी व तेलुगु संस्करण बाँटे तथा भागीदारों को वाराणसी की 12-14 नवम्बर 2011 के बीच होने वाले लोकविद्या जन आंदोलन के अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन में भाग लेने के लिये आमंत्रित किया।

●

कविता

तैयारी

(1)

सब बदल गया
गलियां और बाजार
खेल और खिलौने
रंग और ढंग
चेहरे और सोच
और भी बहुत कुछ।
दोस्त, तुम ही कहते थे
बदलाव ही प्रकृति
तब क्यों है बेचैनी?

निश्चित ही
तुम उनमें नहीं, जो
मोह में जकड़े,
अहं में अकड़े,
लालच में फंसते
गिरते पड़ते,
जोड़ लेते
चार तिनके
और बांध लेते
सलाहों के पुलिन्दे
फिर टेक लगा शान से
और बड़ी मौज में
उन्हें बांटते,
कभी अधिकार से
कभी बेवजह गमगीन होकर
कहते फिरते
अब तो सब बदल गया।

तुम उनमें नहीं
जो इस बदलाव को
मानते हैं
महज एक भटकाव।
तुम उनमें तो नहीं ही
जो विचरते
परीकथाओं में
या मशगूल रहते
बनाते जाते
हवा में किले।

और तुम उनमें भी नहीं
जो बदलाव के
काले पक्ष पर
प्रहार के उत्सुक
बिछी बिसात को
समझने का दावा कर
खुद हो जाते नदारद!

जानता हूं तुम्हें,
देखा है तुम्हें
बहुत गुस्सा करते
लेकिन तुम उनमें भी नहीं
जो तैश में आकर
कुछ भी कर बैठते।
वैसे भी
शिकायत करते
जिन्दगी कटे, ये
मंजूर नहीं तुम्हें।
मेरे दोस्त! तुम्हारी आंखें
खोलती हैं अतीत के परदे
दिखाती हैं बदलाव के मोड़ ऐसे
जिनमें से होकर हम गुजरे
और बदलाव को
मोड़ ले गये सत्य के पक्ष में।

तुम्हारी आंखें! दिलासा देतीं
सुलगाती हैं सपने, कि
आज भी मोड़ ले जायेंगे
इस बदलाव को सत्य के पक्ष में
दोस्त! क्या बात है?
तब क्यों हो बेचैन?

(2)

दोस्त के चेहरे का रंग बदला
मन का चिन्तन मुख पर छाया
होठों को दबाये मुट्ठी को बांधे
बड़ी देर बाद बोला
यार, सब बदल गया!

लूट के तंत्र, बांटने के ढंग,
लड़ाने के तरीके,
झूठ को सच कर दिखाने
के करिश्में,
भ्रम के जाले
सब तो बदल गया
और हमें
निहत्था कर गया।
और हम? ताकते रह गये!
सींचते रह गये
बूढ़े पौधों के बागीचे!
एकदम अनसुना कर
समय का उद्घोष
कि उनमें नहीं आयेंगे फल
कि नया कुछ गढ़!

यही सोचते निकला हूं घर से
साथ है कुछ बातें, कुछ आवाजें
बीबी-बच्चों की हिदायतें।
बच्चे हैं झुंझलाये
''मैदान भी उनके, खेल भी उनके
भला हम जीतेंगे कैसे?''
बीबी ने भी है ठनकाया
कि इकट्ठा हो गया
अब बहुत कचरा
चाहिए एक झाड़ू नया
तब देख पायेंगे हम
अपने घर का कोना-कोना।
बोली, बुलाओ आज मंडली यहीं
बैठेगें यहीं, विचारेंगे वे बातें सारी
पिछले दिनों से अब तक
इकट्ठा किया है जो सब
उनमें से छांटेंगे उतना
जिसे जलाकर हो उजाला
शेष होगा कचरा, जिसे
जरूरी है बाहर करना।

(3)

तो दोस्त, आया हूं
बुलावा लेकर।
अब तुम भी कस लो कमर
चूक न जायें हम
कहीं ये भी मौसम
बाप-दादों की कमाई
कब तक खाई जाती?
संतानें तो ऐसी कहलाती निकम्मी।

ठीक ही कह गया कोई
''निचोड़ लिया वो सब
निचोड़ सके हम जितना
समीक्षा, आलोचना पर आलोचना
मथ लिया, अपने-अपने बर्तन में
मथ सके हम जितना''
लेकिन उसके आगे जोड़ लें
खूब लड़ भी चुके कि
मक्खन निकला कितना?
समय बदल चुका अब
ये सब कुछ काम न देगा
सदी के चिन्तन का यह दीप
अब आलें में ही शोभा देगा
अपने समय का विचार
खुद हमें ही गढ़ना होगा।
उनके विषय उन्हीं के मुद्दे
उनकी बहस उनके नतीजे
हां या नहीं कुछ भी कहे
हो जाते हम उनके हिस्से!
ये मजबूरी छोड़ो यारों
अपने ढंग से सोचो यारों
नई गंध से, नई मिट्टी से
नये जोश से, नई दृष्टि से
इस अंधड़ से लड़ना होगा
अपने समय का विचार
खुद हमें गढ़ना होगा।

–चित्रा सहस्त्रबुद्धे

जीने के अधिकार का अर्थ

- पूँजीवाद और साम्राज्यवाद की सारी व्यवस्थायें किसानों और आदिवासियों से उनकी ज़िन्दगी छीनने पर ही आधारित रही हैं। कानून चाहे जो भी हो, जमीन और प्रकृति से जुड़े लोगों के **जीने के अधिकार** को इस दौर में कभी मान्यता नही मिली।
- पश्चिम के ज्ञान–विज्ञान ने सत्य को समाज से अलग कर दिया। प्रगति और विकास जैसे मूल्यों का महत्व **जीने के अधिकार** के ऊपर कर दिया। नतीजे स्वरूप प्रकृति और लोकविद्याधर समाज का विनाश विकास की कीमत के रूप में देखा जाने लगा।
- लोकविद्या ज्ञान का वह रूप है जो मनुष्य, समाज और प्रकृति के आापसी तालमेल में सत्य को देखता है। **जीने का अधिकार वास्तव में लोकविद्या के बल पर जीने का अधिकार है।**

लोकविद्या जीवनयापन अधिकार

लोकविद्या के बल पर जीने के अधिकार में निम्नलिखित निहित है–

– जीवन का मुख्य आधार प्राकृतिक संसाधनों में है।
– ज्ञान मनुष्य का प्राकृतिक गुण है।
– किसी को भी उन संसाधनों से अलग नही किया जा सकता, जिनका उपयोग वह जीवनयापन के लिये अपने ज्ञान के बल पर करता है।
– संसाधनों से अलग करना मनुष्य को उसके ज्ञान से अलग करने के बराबर है।
– ये मनुष्य समाज के अलिखित सिद्धांत हैं।

लोकविद्या के बल पर जीने के अधिकार को संवैधानिक अधिकार का दर्जा देना चाहिये।

विस्थापन के सक्षम विरोध का आधार लोकविद्या के बल पर जीने और समाज संगठित करने के मूल्य में ही हो सकता है। इसी मूल्य में पूरे लोकविद्याधर समाज यानि किसानों, कारीगरों, आदिवासियों और छोटे–छोटे व्यवसाइयों के बुनियादी अधिकार और कर्तव्य निहित हैं।

लोकविद्या के आधार पर जीवनयापन का अधिकार
मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है

किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटा दुकानदार एक हों

क्योंकि

सूचना युग में कम्प्यूटर-इंटरनेट और वैश्वीकरण मिलकर किसानी, कारीगरी, छोटी दुकानदारी को उजाड़ रहे हैं, मज़दूरी को घटा रहे हैं।

कैसे?

1. **इनके श्रम को बाजार में कम दाम देकर**
2. **इनके ज्ञान यानि लोकविद्या को लूटकर**
3. **शिक्षा को महंगी बना कर व इन्हें नये ज्ञान से वंचित कर**

आइए

1. **लोकविद्या के बल पर जीविका के अधिकार का दावा करें।**
2. **सूचना युग में श्रम और ज्ञान की लूट को रोकने के उपाय खोजें।**
3. **बाजार और ज्ञान के क्षेत्र में हो रहे शोषण की समझ और विरोध को आकार दें।**

लोकविद्या जन आंदोलन की तैयारी में भूमि अधिग्रहण पर विद्या आश्रम में चल रही बहस के अंश

संयुक्त समिति की जरूरत है

सुनील सहस्रबुद्धे, वाराणसी

भूमि अधिग्रहण और जबर्दस्ती विस्थापन अब लंबे समय से सबसे महत्त्वपूर्ण विषय बना हुआ है। इस सिलसिले में सरकार ने 1894 के कानून को बदलने के लिए एक नया विधेयक तैयार किया है जो सार्वजनिक विमर्श के लिए जारी किया जा चुका है। भूमि अधिग्रहण और विस्थापन के खिलाफ संघर्षरत सभी संस्थाओं, संगठनों और आंदोलनों ने इस पर विस्तृत और गहरी आपत्तियां दर्ज की हैं। अधिकांश इस विधेयक को खारिज करके एक नयी सबको शामिल करने वाली प्रक्रिया के जरिए एक नया विधेयक बनाने के पक्ष में हैं।

भ्रष्टाचार विरोध आंदोलन जब अपने चरम पर था तब इन्हीं पन्नों में हमने यह कहा था कि इस आंदोलन की एक बड़ी सकारात्मक उपलब्धि संयुक्त समिति बनवा लेने में रही। सुझाव अब यह है कि भूमि अधिग्रहण विधेयक बनाने का सबसे अच्छा रास्ता संयुक्त समिति का रास्ता ही है और किसान आंदोलनों तथा जन आंदोलनों के प्रतिनिधियों और सरकार के नुमाइंदों की एक संयुक्त समिति इस कार्य के लिए बनायी जानी चाहिए। इस मांग को लेकर इन सभी आंदोलनों के बीच समन्वय कायम करना चाहिए। ऐसी संयुक्त समिति वर्तमान राजनैतिक फंसाव से देश को बाहर निकालने और लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक प्रगतिशील प्रयोग की दृष्टि से बड़ा महत्त्वपूर्ण कदम साबित हो सकती है।

किसान ही विधाता है, उसी को खत्म कर दोगे!

ललित कुमार कौल, हैदराबाद

भूमि कोई मनमाने ढंग से और जोर-जबर्दस्ती में हथियाने या बांटने की चीज नहीं है। चाहे वह किसी के भी मालिकाने में हो, किसान, आदिवासी या कोई अन्य खेतिहर समुदाय, कोई भी। जमीन जिस पर खेती हो सकती है या जो सही तत्त्वों का इस्तेमाल करके और सही प्रबंधन के जरिये खेती लायक बनायी जा सकती है, किसी और माल की तरह खरीद-फरोख्त की चीज नहीं है क्योंकि यह जिन्दगी चलाते रहने का मौलिक संसाधन है। यह कोई ईंट-सीमेंट, इस्पात और शोषित श्रम के पसीने से बनाया गया छोटा या बड़ा भवन नहीं है। यह मनुष्य द्वारा निर्मित कोई वस्तु नहीं है, यह इस दुनिया के निर्माता द्वारा जीवित और जीवहीन सभी के लिए दिया गया एक उपहार है। यह एक ऐसा संसाधन है जिसका मनुष्यों की संख्या के साथ अनुपात यदि एक सीमा से नीचे चला गया तो किसी भी स्तर का तकनीकी या वैज्ञानिक आविष्कार भूखे लोगों को खाना नहीं दे सकेगा। विज्ञान की खोजें, गणित के सिद्धांत और कम्प्यूटर व आधुनिकतम प्रौद्योगिकी, अर्थशास्त्रियों, दार्शनिकों, वैज्ञानिकों और उनकी जमात के लोगों का तो सवाल ही नहीं है।

इसलिए जमीन और कृषि के लिए जरूरी तत्त्वों और सही प्रबंधन का इंतजाम न करके उसे खरीद-फरोख्त की वस्तु बना देना मानव जीवन से सारा खून चूसकर उसका अंत कर देने का राक्षसीपन है। चूंकि कृषि और जंगल का स्थान कुछ और नहीं ले सकता इसलिए उसके मुआवजे का खयाल ही गलत है। भोजन की उपलब्धता पर सब कुछ निर्भर करता है। किसान मानवता के शुरु से ही जिन्दगी और सभ्यता का आधार देता रहा है। उसे ही विस्थापित किया जाय, यह पूरी तरह मानवता विरोधी और अतार्किक है। भोजन, पानी और हवा का कोई मुआवजा नहीं होता।

कहीं ऐसा तो नहीं है कि भूमि अधिग्रहण विधेयक लाने वाले लोग, यह सोचते हैं कि अब जल्दी ही प्रयोगशाला में बने खाद्य खाने से काम चल जाएगा?

यह सब जानते हैं कि खेती के आधुनिक तरीकों ने केवल जमीन ही खराब नहीं की है बल्कि उत्पाद भी प्रदूषित कर दिया है। इसने उर्वर भूमि को बंजर बनाया है और पानी के संसाधन खत्म कर दिए हैं। लागत बढ़ती चली गयी है और उत्पादन घटता गया है। यह मानना होगा कि कृषि कोई मात्र व्यवसाय या धंधा नहीं है जो कम से कम समय में ज्यादा से ज्यादा फायदा दे। हरित क्रांति के जरिए कृषि-विज्ञान की परकीय और आक्रामक अवधारणाएं किसानों पर थोप दी गयी हैं, इन पर बड़े पैमाने पर पुनर्विचार की जरूरत है। और उन स्वदेशी तकनीकों को वापस लाना जरूरी है जो जमीन और भोजन को प्रदूषित नहीं करतीं। यह मानना होगा कि स्थानीय किसान शुरू से ही खेती के विज्ञान और कला के जानकार रहे हैं, उन्हें ही, उनकी विद्या (लोकविद्या) का इस्तेमाल करने के लिए प्रोत्साहित करना होगा।

यह कहा जाय तो गलत नहीं होगा कि देश को एक ऐसे विधेयक की जरूरत है जो स्वस्थ कृषि की पुनर्स्थापना, सूखते जा रहे जल-संसाधनों के पुनरुज्जीवन तथा वायु प्रदूषण समाप्त करने की विधियों को कानून का दर्जा दे। यह कर पाने के लिए मनुष्य द्वारा बनाये गए तमाम राक्षस जमीनदोस्त कर दिये जाने चाहिए और उनका मुआवजा दे दिया जाना चाहिए।

दक्षिण भारत के किसान आंदोलनों के समन्वय ने एक संपूर्ण दृष्टि अपनायी है। उन्होंने ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित भूमि अधिग्रहण विधेयक 2011 को रद्द करके एक नया मसौदा तैयार करने की बात की है। उनके दृष्टिकोण का समर्थन किया जाना चाहिए और उन्हें लोकविद्या जन आंदोलन से जोड़ना चाहिए।

किसान को नेतृत्व की भूमिका में आना चाहिए

के. के. सुरेन्द्रन, पुणे

मेरे खयाल में ऐसे तरीकों पर सोचना जरूरी है जो किसानों को जमीन से पूरी तरह अलग नहीं करते हैं। एक तरीका यह हो सकता है कि जब किसानों की जमीन उद्योगों, राजमार्गों, नगरों, हवाई अड्डों आदि के लिए चाहिए होती है तब किसान संयुक्त रूप से उसे किराये पर देने के बारे में सोच सकते हैं। ऐसे विकल्प पर गंभीर चिन्तन की जरूरत है। शायद नगर नियोजन के संदर्भ में इस किस्म के विचार पर कार्य हुआ है।

जो जरूरी है वह यह कि दूर तक देखा जाय और मुआवजे की राजनीति को समझा जाय। यह तो केवल वित्तीय पूंजी का एकतरफा प्रस्ताव होता है। इसमें कम जमीन वाले किसानों का भविष्य एकदम अंधकारमय होता है। गांव के लोग तरह-तरह के ज्ञान के स्वामी होते हैं इसे ध्यान में रखते हुए लोकविद्या दृष्टिकोण से भूमि अधिग्रहण और विस्थापन पर दृष्टि बनाना जरूरी है। किसानों को किसी और के बनाये समाज में अपने लिए जगह खोजने के स्थान पर अपनी दृष्टि से समाज कैसा होना चाहिए इस पर कार्य करना चाहिए यानि समाज का नेतृत्व अपने हाथ में लेने की ओर बढ़ना चाहिए। जमीन और पूंजी में बड़ा अंतर होता है। किराये पर देने से पहले वे अपनी जमीन की ऊपरी मिट्टी अपने लिए निकाल ले सकते हैं जिसे वे चाहे बेच दे या कहीं बंजर पर बिछा कर वहां कृषि का रास्ता खोले। जिस तरह पूंजीपतियों को पैसे के प्रबंधन और लाभ कमाने के सारे अधिकार प्राप्त हैं उसी तरह किसानों को पृथ्वी के प्रबंधन के अधिकार होने चाहिए। जब किसान पृथ्वी की सतह, कृषि, नदी, जंगल सभी पर काबिज होंगे तब दुनिया अलग ही शक्ल लेने लगेगी। किसानों को अपने बचाव में नहीं फंसे रहना चाहिए जो उन्हें बाकी लोगों से अलग करता है बल्कि नेतृत्व की भूमिका में आना चाहिए जिसमें और लोग उनसे जुड़ते हैं। यह रास्ता केवल अपनी बात करने का रास्ता नहीं है। शुरुआत सार्वजनिक वितरण प्रणाली, अनाज भण्डारण, पानी के वितरण और वैकल्पिक ऊर्जा के प्रश्नों पर अपने दखल का ऐलान करके की जा सकती है।

वैकल्पिक भूमि अधिग्रहण जन विधेयक आवश्यक है

बी. कृष्णराजुलु, हैदराबाद

कर्नाटक राज्य रैयत संघ का एक प्रतिनिधि मण्डल अगस्त 2011 में दिल्ली गया था और केन्द्र सरकार को अपना ज्ञापन दे चुका है। पूर्व गोदावरी जिले का प्रतिनिधि मण्डल भी दिल्ली जा चुका है जिसका प्रमुख संदर्भ 'फसल सत्याग्रह' का रहा, यानि उन लाखों किसानों का जिन्होंने आंध्र प्रदेश के पूर्वी गोदावरी जिले में इस साल धान की बुआई करने से इनकार कर दिया क्योंकि उससे उनकी जीविका भी नहीं चल पा रही। महाराष्ट्र में होने वाली (22 सितंबर 2011) किसान समन्वय समिति की बैठक में आंध्रा के तटवर्ती इलाकों के किसानों की प्रतिनिधि के रूप में नागेन्द्रनाथ को बुलाया जाना चाहिए। विजय जावंधिया उन्हें बुला सकते हैं अथवा चुक्की नन्जुण्डस्वामी के मार्फत भी यह हो सकता है। भूमि अधिग्रहण का विषय लोकविद्या जन आंदोलन का महत्त्वपूर्ण विषय है। इसे सभी मंचों पर उठाया जाना चाहिए और लोकविद्या जन आंदोलन के अपने ब्लाग पर भी यह बहस होनी चाहिए।

नेल्लोर में होने वाली जन आंदोलनों के राष्ट्रीय समन्वय की सभा (17-18 सितंबर 2011) में हैदराबाद से नारायण राव और ललित कौल जा रहे हैं। तमाम बिजली प्रकल्पों के लिए नेल्लोर में किसानों की जमीनें छीनी जा रही हैं। इसी संदर्भ में और भूमि अधिग्रहण विधेयक को लेकर यह सभा है। नारायण राव और कौल लोकविद्या जन आंदोलन की ओर से जन आंदोलनों के राष्ट्रीय समन्वय के सामने यह प्रस्ताव रखें कि वे किसान आंदोलन के साथ मिलकर एक वैकल्पिक भूमि अधिग्रहण जन विधेयक तैयार करें और उस पर सार्वजनिक बहस चलाने के बाद वह सरकार व जन आंदोलनों की संयुक्त समिति के सामने अंतिम रूप देने के लिए आये।

•

लोकविद्या की समाजदृष्टि

1. सभी को अपनी विद्या के बल पर जीवन चलाने का मौलिक अधिकार हो।
2. कृषि उत्पाद को जायज़ दाम हो।
3. राष्ट्रीय संसाधनों का गाँव और शहर में बराबर का बँटवारा हो।
4. घर-घर में उद्योग हो।
5. स्थानीय बाजार को संरक्षण हो।
6. अधिकतम और न्यूनतम आय में 5:1 से अधिक का अनुपात न हो।
8. गाँव-गाँव में मीडिया स्कूल हो।
9. उच्च शिक्षा के दरवाजे सबके लिये खुले हों।
10. लोकविद्या को विश्वविद्यालय के ज्ञान के बराबर का दर्जा हो।

लोकविद्या नौजवान सभा की बैठक

संतोष कुमार संविज्ञ, संयोजक

दिनांक 14.09.2011 दिन बुधवार को प्रातः 10.00 बजे से यात्री हाल बावन बीघा तालाब सुरियावा (संत रबिदास नगर) भदोही में लोकविद्या नौजवान सभा की बैठक सम्पन्न हुई। बैठक में 12-14 नवंबर तक विद्या आश्रम, सारनाथ में होने वाले अंतर्राष्ट्रीय लोकविद्या जन आंदोलन अधिवेशन में भदोही जिले से लोगों की भागीदारी पर चर्चा के साथ दो गोष्ठी में प्रमुख रूप से यह विचार-विमर्श किया गया कि आजादी के बाद से देश में पूंजीवादी विकास ने आर्थिक गैर-बराबरी को समाज में बढ़ाया है। उत्पादनों और संसाधनों पर प्रभुत्वशाली लोगों का कब्जा होता चला गया है। पूरे देश को रोटी कपड़ा मकान व सम्मान देने वाले किसान, कारीगर, पटरी, व्यवसायी, आदिवासी एवं मजदूरों का जीवन स्तर नारकीय होता गया। उनके बच्चों को शिक्षा और रोजगार से वंचित किया जा रहा है। समाज में ऐसी व्यवस्था कायम हो गयी है कि जिस परिवार में सरकारी नौकरी है, उस परिवार का जीवन खुशहाल है, अन्य परिवारों का जीवन कष्टमय है। लोकविद्या नौजवान सभा यह मांग करेगा कि सभी को नौकरी मिलनी चाहिए। जो जिस काम को जानता है, उसे उसके ज्ञान के आधार पर जानकारी और नौकरी दी जाय। राष्ट्रीय संसाधनों का बराबर का बंटवारा हो। बिजली, शिक्षा, चिकित्सा तथा वित्त का बराबर का बंटवारा हो। राष्ट्रीय संसाधनों को बनाने में राष्ट्र की पूंजी लगती है, उस पर सभी नागरिकों का बराबर का अधिकार होता है। बिजली से शहर प्रकाशमान है, अमीरों का घर प्रकाशमान है लेकिन गांवों में मशीनें चलाने के लिए बिजली नहीं है। गांव और शहर को बराबर बिजली मिलने से गांव शहर का अंतर समाप्त होगा। गांव खुशहाल होगा, गांवों में रोजगार होगा। शिक्षा महंगी और निजी होने से उच्च शिक्षा के दरवाजे किसानों और मजदूरों के बच्चों के लिए बन्द हो गये हैं। शिक्षा राष्ट्रीय संसाधन है तो उस पर सभी का बराबर का अधिकार है। इसलिए शिक्षा नीति ऐसी होनी चाहिए कि इस देश का सबसे कम आय वाला व्यक्ति भी अपने बच्चों को ऊंची शिक्षा दिला सके। तभी एक भ्रष्टाचार मुक्त, गैरबराबरी मुक्त खुशहाल भारत का निर्माण हो पायेगा।

बैठक का संचालन रामजी राव ने किया। बैठक में अरुण यादव, अरविन्द मौर्या, चन्द्रेश यादव, अच्छेलाल, भुलेश्वर, विजय कुमार, अरविन्द कुमार, राजकुमार गौतम तथा देवेन्द्र मणि ने विचार व्यक्त किया।

•

लोकविद्या पंचायत के पाठकों से

- **वार्षिक सदस्यता शुल्क रु. 50/-**
- **वेतन पाने वालों से कम से कम रु. 100/- प्रति वर्ष अपेक्षित है।**
- **आजीवन सदस्यता रु. 1000/-**
- **अपने क्षेत्र के लोकविद्याधरों की समस्यायें, संघर्ष एवं संगठनों के बारे में अवश्य लिख भेजें।**

सम्पर्क फोन

+91-9369124998, +91-9838944822

आधुनिक दुनिया के शूद्र और लोकविद्या

ललित कुमार कौल, हैदराबाद

हमारे यहां के वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की बहुत बड़ी-बड़ी बातें करने की आदत है। जबकि वास्तविकता यह है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की दुनिया में उनका योगदान नहीं के बराबर है। अगर आप आयात सूची देखेंगे तो खुद-ब-खुद यह साफ हो जाएगा। सिलाई की सूई, कलम, पंखा या कोई भी इलेक्ट्रानिक का सामान, बिजलीघर के उपकरण, मेडिकल के आधुनिक उपकरण या किसी भी आधुनिक मशीन को आप ले लें, उसके डिजाइन से लेकर उत्पादन तक कहीं भी आपको भारतीय बुद्धि की छाप नहीं दिखाई देगी। वैज्ञानिक समुदाय केवल ऊंची-ऊंची बातें करता है, जिससे सामान्य लोग उन्हें बड़े सम्मान के साथ देखें।

विज्ञान संस्थाओं और वैज्ञानिकों कीअसफलता ही असफलता : श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में सन् 1975 में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को सामने रखते हुए एक राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी नीति दस्तावेज बनाया गया। इसके पहले से ही पंचवर्षीय योजनाओं ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बढ़ावे की आधारशिला रख दी थी। इस सबके चलते एक के बाद एक केन्द्रीय सरकारों ने वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं, संस्थाओं और उसके लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे के विकास पर असीम धन खर्च किया। नतीजा क्या हुआ है?

1. बड़े-बड़े शहरों में महत्त्वपूर्ण स्थानों पर बड़ी जमीनों का अधिग्रहण किया गया, जिसके चलते पारम्परिक धन्धे बड़े पैमाने पर उजड़े।
2. बड़ी-बड़ी प्रयोगशालाएं बनाई गईं, ए.सी. लगाये गये और आधुनिकतम सामग्री और मशीनें लगाई गईं।
3. तथाकथित इन तेजतर्रार दिमागों के लिए जो भारत को दुनिया के नक्शे पर लाने वाले थे सुविधाजनक आवास व्यवस्था बनाई गई और
4. इन लोगों के लिए उन परिसरों पर अस्पताल, स्कूल, बगीचे, बाजार व मनोरंजन की और व्यवस्थाएं बनाई गईं।

यह क्रिया-कर्म बड़े और बीच के पैमाने पर वैज्ञानिकों और सहायक स्टाफ को नौकरी देने के साथ रुक गया। सबसे बड़ा सवाल जिसका जवाब ढूंढ़ना शुरू हुआ वह यह था कि इस ढांचे और मानव संसाधन के साथ क्या किया जाय? जबकि देश के अंदर ही अनुसंधान और विकास के लिए बड़ा निवेश जारी है, सवाल वैसा का वैसा बना हुआ है।

जब यह पाया गया कि उत्पादन के क्षेत्र, स्वास्थ्य सेवाएं और ऊर्जा का क्षेत्र देश की जरूरतों के नजदीकी अथवा दूर के लक्ष्यों को पूरा करने में असमर्थ है, तो चुपचाप आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को ही दफना दिया गया।

इसका नतीजा यह हुआ कि विदेशी सहयोग के रास्ते खोल दिए गए। न शोध-विकास के केन्द्रों पर तथा न उत्पादन की इकाइयों में ही कुछ नया करने और अपना दिमाग लगाने का जज्बा बचा रहा। नतीजा यह हुआ कि हम बाजार की प्रतिस्पर्धा में अपने उत्पादों की गुणवत्ता न बढ़ा पाने के कारण बाहर होते चले गए। एम्बेसेडर और पद्मिनी मोटरों के बड़े उदाहरण सामने हैं। बड़े कारखाने नए-नए सहयोग में जाने लगे और छोटे वाले बंद हो गए।

जब यह सब होता रहा तब वैज्ञानिकों का उच्च वर्ग बड़े-बड़े संस्थानों में बैठा, गूंगा पर्यवेक्षक बना रहा और ऐसे कोई प्रयास नहीं किए गए जिनमें हम अपने दिमाग लगाकर गुणवत्ता में सुधार का लक्ष्य रखते।

वैश्वीकरण के युग में भारतीय वैज्ञानिक इतिहास के कूड़ाघर में : इस युग में भारत के बाजार एक से एक नई विदेशी वस्तुओं से भरे हैं। भारत के वैज्ञानिक दौड़ के बाहर हो गए, 1975 के राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी नीति दस्तावेज के साथ की गई गद्दारी खुलकर सामने आ गई। इस युग में उद्यमियों, अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञों के बीच नया समीकरण बना और अपने बल पर कुछ करने का मुखौटा उतार फेंका गया। तथा भारत के बाजार बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए पूरी तरह खोल दिए गए। फलस्वरूप भारतीय वैज्ञानिकों और इंजीनियरों ने अपनी पिछले दशकों की करतूतों के चलते खुद को अब इतिहास के कूड़ाघर में पाया। अब आर्थिक विकास के आधुनिक रास्तों में उनकी कोई भूमिका नहीं थी। अब उनके श्रम की जो कीमत मिल जाए उसे लेकर उन्हें अपने मालिकों के डिजाइन पर काम करना था। बंधुआ मजदूरी का पुनर्जन्म हुआ, हां थोड़ा सम्मानजनक लगे इस तरह से।

लेकिन 'आधुनिक भारत के ये मंदिर' अपने खण्डहर रूप में भी बने रहने थे, क्योंकि यहां से बहुराष्ट्रीय कंपनियों और उनके देशी रूपों के लिए सस्ती श्रमशक्ति तैयार होती थी। यहां के कर्मचारी मध्य वर्गों में एक प्रभावी और सम्मानजनक स्थान रखते रहे और आने वाली पीढ़ियां वहां जाने के मंसूबे रखती जिसके जरिए वे अपने समाज में सम्मान पाते। इस तरह इन संस्थाओं में बड़ा परिवर्तन हो गया। अब वहां तकनीकी समीक्षाएं नहीं होतीं लेकिन सामग्री की खरीद बड़े पैमाने पर होती है क्योंकि सरकारें चाहती हैं कि शोध और विकास पर न्यूनतम खर्च जारी रहे। इसलिए ढांचागत खर्च बढ़ता गया और मानव संसाधन भी। यह सब किसलिए? यह सवाल ही अप्रासंगिक हो गया क्योंकि अब उद्देश्य केवल ज्यादा से ज्यादा आवंटित धन का खर्च ही हो गया और इसका सीधा सम्बन्ध टैक्स में छूट के साथ बंध गया। यह सार्वजनिक धन का खर्च और सार्वजनिक दुनिया को ही गुमराह करना जारी है। न कोई सवाल पूछे जाते हैं, न कोई जवाब दिए जाते हैं। सार्वजनिक धन का यह महादुरुपयोग खुलेआम चल रहा है।

वैश्वीकरण और उदारीकरण ने आधुनिक समाजों को दो जातियों में बांट दिया है : शूद्र और ब्राह्मण। ब्राह्मण ज्ञान का प्रतिनिधि है और शूद्र वे असंख्य कार्यकर्ता हैं जो इस ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण को जारी रखने के लिए काम करते हैं। ब्राह्मण यूरोप और अमेरिका में हैं जबकि हमारे अपने वैज्ञानिक, इंजीनियर और प्रौद्योगिकी विशेषज्ञ शूद्र हैं।

आजादी के 67 वर्षों में आधुनिक भारत की सरकारों ने वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों को सिर पर बैठाया है और पारम्परिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के मालिकों, देशी ब्राह्मणों के साथ शूद्र जैसा व्यवहार किया है, उन्हें अज्ञानी और अंधविश्वासी बताया है तथा उन्हें नए विकासशील वर्गों की सेवा में इस्तेमाल के लायक मात्र समझा है। लेकिन जो बहुत ही ध्यान देने लायक और खास बात है कि शूद्रों जैसे व्यवहार का भुक्तभोगी लोकविद्याधर समाज अपनी विद्या के बल पर सारी कठिनाइयों और हमलावर परिस्थितियों के बावजूद अपनी उत्पादकता बचाए और बनाए रखने में सफल रहा है, जबकि जिन्हें सर आंखों पर बैठाया गया उत्पादकता में शून्य बने रहे और अब आधुनिक दुनिया के शूद्र बन गए हैं।

इन दोनों में ही यही अंतर है। लोकविद्याधर समाज 1757 से उसके ऊपर होने वाले सारे आक्रमणों को झेलता रहा है। अन्याय और शोषण के बावजूद अपनी विद्या के साथ जिन्दा है तथा अब आर्थिक सुधारों के नाम पर उसकी हर चीज छीनी जाने के खिलाफ एकजुट होने में प्रयासरत है। दूसरी ओर आधुनिक शूद्र की कोई जड़ें नहीं हैं। वह आधुनिकता को आत्मसात करने में असफल है और अपनी सुख-सुविधा के लिए हर तरह के समर्पण के लिए तैयार है। जबकि लोकविद्याधर स्वतंत्र उद्यम की अपनी क्षमता से ताकत पाता है, आधुनिक शूद्र अपने ब्राह्मण पर पूरी तरह आश्रित है। जबकि जिसे शूद्र कहा जाता है उसका ज्ञान के उत्पादन पर जायज दावा है, आधुनिक शूद्र ऐसा कोई दावा नहीं कर सकता क्योंकि आर्थिक सुधार की प्रक्रिया ने उसे पूरी तरह बेनकाब कर दिया है। लोकविद्या की जड़ें इसी धरती में हैं जबकि आधुनिक शूद्र के ज्ञान की जड़ें दूरस्थ समाजों में हैं, इसीलिए लोकविद्या बनी रहेगी।

•

लखनऊ में बिनायक सेन और प्रशांत राही

11 सितंबर 2011 को लखनऊ में मानवाधिकार हनन को लेकर एक सम्मेलन का आयोजन हुआ। बिनायक सेन और प्रशांत राही इस सम्मेलन के प्रमुख अतिथि थे। प्रशांत राही ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से इंजीनियरिंग की डिग्री लेने के बाद पत्रकारिता का रास्ता चुना, उत्तराखंड में सक्रिय इस निर्भीक सामाजिक पत्रकार को

मानवाधिकार हनन की बैठक में बिनायक सेन

2008 में माओवादी करार देकर गिरफ्तार कर लिया गया था। जेल में तरह-तरह की यातनाएं दी गयीं और तनहा भी रखा गया। प्रशांत राही ने सभी के हथियार डाल देने के बाद टिहरी बांध के विरुद्ध संघर्ष को पुनर्जागृत किया था और अभी हाल में छूटने के बाद लखनऊ के इस सम्मेलन में उन्होंने जन आंदोलनों के प्रति सरकार की दमन नीति के खिलाफ अपना संघर्ष जारी रखने का संकल्प दोहराया।

डॉ. बिनायक सेन छत्तीसगढ़ के आदिवासियों के बीच बीसों साल से जन स्वास्थ्य रक्षा का कार्य करते रहे हैं। सामाजिक दृष्टि से जागरुक इस डॉक्टर को भी माओवादियों के साथ सहयोग के आरोप में 2008 में छत्तीसगढ़ से गिरफ्तार किया गया था। इन पर देश-द्रोह का मुकदमा चल रहा है। इनकी रिहाई के लिए देश और विदेश में बड़े-बड़े अभियान चले और अभी ये उच्चतम न्यायालय द्वारा स्वीकृत जमानत पर बाहर हैं। इन्होंने लखनऊ सम्मेलन में देशद्रोह के कानून को सर्वथा नाजायज बताते हुए उसे खत्म करने की मांग सामने रखी।

यह मानवाधिकार सम्मेलन जन आंदोलनों के राष्ट्रीय समन्वय की उत्तर प्रदेश इकाई ने आयोजित किया था। रिटायर्ड पुलिस अफसर एवं सामाजिक कार्यकर्ता एस. दारापुरी, राजस्थान की पी.यू.सी.एल. सचिव कविता श्रीवास्तव और पी.यू.सी.एल. के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष इलाहाबाद उच्च न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता रविकिरण जैन ने सभा को संबोधित किया। सभी ने राजनैतिक बंदियों के प्रति शासन के दमनात्मक रुख और उन्हें छुड़वाने में आने वाली न्यायालयीय पेचिदगियों के बारे में विस्तार से बताया। यह बताया कि किस तरह से जमानत की सुनवाई भी वर्षों तक टलती चली जाती है। सभी ने इलाहाबाद में बंद सीमा आजाद के बारे में बात की। सीमा आजाद पी.यू.सी.एल. की कार्यकर्त्री हैं, जिन्हें दो साल पहले माओवादी साहित्य रखने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया था और आज तक सुनवाई भी नहीं हुई है। सम्मेलन में एकमत से सीमा आजाद की रिहाई की मांग की गयी।

जब सभा में खुली बहस शुरू हुई तो विद्या आश्रम के कार्यकर्ता दिलीप कुमार 'दिली' ने कूड़ा डंपिंग बनाने के लिए भूमि के जबर्दस्ती छीने जाने के विरोध में वाराणसी के गांव करसड़ा के किसानों के संघर्ष की बात रखी। इस पर जन आंदोलनों के राष्ट्रीय समन्वय के उत्तर प्रदेश के संयोजक डॉ. संदीप पाण्डे ने यह बात विस्तार से रखी कि किस तरह आज देशभर में भूमि छीने जाने का विरोध ही शासन के दमन के केन्द्र में है। इस सिलसिले में गंगा एक्सप्रेस वे के अंतर्गत भूमि अधिग्रहण के विरोध में सीमा आजाद की भूमिका को याद किया गया।

•

राजनीतिक बंदियों की रिहाई की मांग

संजरपुर आजमगढ़ का वह गांव है जहां के दो नौजवान चार साल पहले दिल्ली में बाटला हाउस मुठभेड़ में मारे गये थे। इसी बाटला हाउस काण्ड की तीसरी बरसी पर 19 सितंबर को संजरपुर में उत्तर प्रदेश के न्यायप्रिय नौजवानों के एक समूह ने एक मानवाधिकार सम्मेलन का आयोजन किया। मानवाधिकारों के लिए संघर्षरत उत्तर प्रदेश के तमाम कार्यकर्ता इस सम्मेलन में शरीक हुए। नौजवानों के अलावा सुभाषिनी अली, चितरंजन सिंह, शोएब अहमद, चित्रा सहस्त्रबुद्धे, प्रशांत राही, एस. दारापुरी, डॉ. जावेद, अजीत शाही और सुनील सहस्त्रबुद्धे ने अपने विचार सम्मेलन में रखे। तथाकथित आतंकवाद खत्म करने के सरकारी दमनात्मक रवैये की एक बहुचर्चित शिकार गुजरात की इशरतजहां की मां, भाई और बहन इस सम्मेलन में शरीक होने के लिए बम्बई से चलकर आए थे। सम्मेलन में पुलिस के प्रति रोष साफ झलक कर सामने आ रहा था।

दो बातों पर सम्मेलन का जोर था। एक, यह कि देश को एक ऐसे न्यायिक आयोग अथवा प्राधिकरण की जरूरत है जो आतंकवादी होने के नाम पर पकड़े जा रहे सभी व्यक्तियों की सुनवाई करे और जिसके द्वारा एक साल में सुनवाई पूरी करके फैसला देने की व्यवस्था हो। इसके लिए जल्दी ही एक अभियान शुरू करने का प्रस्ताव पारित हुआ।

दूसरा यह कि राजनीतिक बंदियों की रिहाई की मांग बुलंद करना जरूरी है। राजनीतिक बंदी उन सबको कहा जाता है जो राजनीतिक कार्यों के लिए, सामान्य तौर पर जन आंदोलनों और संघर्षों की पक्षधरता के लिए, जेल में ठूंसे जाते हैं और उन लोगों को भी जिन्हें गिरफ्तार करना राजनीति से प्रेरित होता है।

कहा जाता है कि देशभर में हजारों सामाजिक कार्यकर्ता जेलों में बंद हैं। ये कार्यकर्ता बड़े पैमाने पर आदिवासियों, किसानों व अन्य उपेक्षित वर्गों के संघर्षों के साथ जुड़े हुए हैं। लेकिन इस पर कोई पूरी तरह से विश्वसनीय जानकारी उपलब्ध नहीं हो पाती। खासकर समय-असमय होने वाले बम-विस्फोटों के बारे में तमाम परस्पर विरोधी बातें समाज में फैली हुई है, इस सबका बेहद नकारात्मक प्रभाव सामाजिक ताने-बाने और शांति की व्यवस्थाओं पर पड़ता है, आपसी विश्वास टूटता है और संदेह का वातावरण बनता है। किसी भी समाज की प्रगति में ये बातें बड़ी बाधा का काम करती हैं। राज्य सरकारों और केन्द्र सरकार को आगे बढ़कर इस माहौल को सुधारने के लिए कदम उठाने चाहिए। इस विषय पर सरकार यदि एक श्वेत पत्र जारी करे तो सामाजिक सद्भाव की दिशा में एक ठोस और बड़ी पहल होगी।

•

गाँव को पुनर्निर्माण के केन्द्र में लाना अनिवार्य है

2011 की जनगणना के कुछ नतीजे आने शुरू हो गये हैं। जो आँकड़े आये हैं उनका अर्थ यह निकलता है कि शहरीकरण तेजी से बढ़ा है लेकिन बड़े पैमाने पर ये सब लोग उन बस्तियों में रहते हैं जहां न कोई बुनियादी ढांचा है और न सरकार की ओर से कोई व्यवस्थित सुविधाएं हैं। वैसे तो यह आम जानकारी की बात है कि घर-बार छोड़कर पुरुष शहरों में काम करने के लिए लंबे-लंबे समय के लिए जाते हैं। एक ही साल में कई जगह भी जाते हैं और ठेकेदारी की व्यवस्थाओं में कम से कम मजदूरी पर कठिन से कठिन परिस्थितियों में रहते हैं।

अखबारों में भी इस जनगणना के हवाले यह आ चुका है कि 2011 में ग्रामीण आबादी कुल आबादी की लगभग 68 फीसदी है जबकि 2001 में यह 71 फीसदी के आसपास थी। उत्तर प्रदेश में यह संख्याएं 77 फीसदी और 79 फीसदी के आसपास हैं। आजादी के बाद 60 से अधिक वर्षों में ग्रामीण आबादी अभी भी स्पष्ट तौर पर दो-तिहाई से ज्यादा है। क्या यह साफ नहीं है कि शहरों में केन्द्रित विकास की अवधारणा हमारे देश के लिए एक मरीचिका से कुछ अधिक नहीं है। हमारी भलाई इसी में है कि जितनी जल्दी हो सके हम गांधीजी का बताया रास्ता अपनाएं।

•

गांव को कूड़ाघर मत बनाओ

वाराणसी के इर्द-गिर्द के गांवों में गांव को कूड़ाघर न बनने देने की चेतना जागृत हो चुकी है। सथवां, करसड़ा, दीनापुर, सतबलपुर, भीटी, रमना और चौबेपुर के नागरिक अपने यहां सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बनाने और शहरी कूड़े को गिराने के विरोध में संघर्षरत हैं। यह सबके समझ में आ गया है कि इस प्रक्रिया में गांव वालों पर तगड़ी दोहरी मार बैठती है। एक तो यह कि जो जमीन गांव वालों की होनी चाहिए, किसानों या ग्राम समाज की होनी चाहिए वह इस कृत्य के लिए उनसे छीन ली जाती है और दूसरा यह कि, पूरा इलाका घोर पर्यावरणीय विनाश का शिकार होता है, जल-स्रोत दूषित हो जाते हैं, कृषि खराब होती है, दुर्गन्ध फैल जाती है और बीमारियों का तो पूछिए ही मत।

शहर के पास के गांवों में सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बनाने की प्रक्रिया 30 साल पहले शुरू हुई थी और स्थानीय नागरिक यह देखते रहे हैं कि सरकार द्वारा किया गया एक भी वायदा पूरा नहीं होता है। न सिंचाई के पानी के बारे में, न सफाई के बारे में, न मुआवजे के बारे में और न नौकरी के बारे में। अब यह एक, दो या तीन गांवों की समस्या नहीं रह गयी है। वाराणसी के इर्द-गिर्द के गांवों के नागरिक अब गांवों को कूड़ाघर बनने देंगे, ऐसा लगता नहीं है।

भारतीय किसान यूनियन के नेतृत्व में करसड़ा के कूड़ाघर के खिलाफ पूरे तीन महीने से धरना जारी है। सरकार के कान पर जूं तक नहीं रेंग रही। हाल में 18 सितंबर को क्षेत्र के लोगों ने तय किया कि डम्पिंग ग्राउण्ड में चल रहा कार्य बंद कर देंगे। बस, कहना क्या था, सैकड़ों की तादाद में पुलिस, पी.ए.सी. और अफसर हाजिर हो गए। लगभग एक हजार किसानों, नौजवानों और महिलाओं ने अपना दबाव बनाकर रखा। अंत में पुलिस ने आक्रामक तेवर दिखाये व जनहित व शांति व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए भारतीय किसान यूनियन ने उस दिन का संघर्ष स्थगित करते हुए धरना जारी रखने और एक किसान महापंचायत बुलाने की घोषणा की।

एक समय था जब पढ़े-लिखे लोगों ने और प्रगतिशील विचारकों और कार्यकर्ताओं ने सर पर मैला ढोने को निकृष्टतम अन्याय कहा था और पूरी तरह से इस प्रथा को बंद करने की मांग बुलंद की थी। क्या शहरों का मल और कूड़ा गांवों के सर पर फेंका जाना उसी प्रथा का नया रूप नहीं है?

•

अगल-बगल दिये गये फोटो 18 सितम्बर 2011 को करसड़ा (वाराणसी) में कूड़ा डम्पिंग स्थल के खिलाफ हुए संघर्ष की कहानी बता रहे हैं।

अब लौ नसानी, अब ना नसैहौं

दीनापुर पंचायत में किसानों ने विज्ञान, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी पर उठाये सवाल !

दिलीप कुमार, वाराणसी

26 सालों से गंगा प्रदूषण नियंत्रण इकाई से महामारी का दंश झेल रहे दीनापुर के किसानों ने प्रदूषण व भूमि मुक्ति आंदोलन नाम से एक दिवसीय धरना 25 अगस्त 2011 को मुख्य गेट पर दिया। गंगा प्रदूषण नियंत्रण इकाई दीनापुर(सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट) के लिए 26 वर्षो पूर्व जमीन ली गई। मुआवजा के अलावा नौकरी, बिजली, पानी मिलने का वादा पूर्व प्रधानमंत्री स्व0 राजीव गांधी ने किया था। नौकरी ,बिजली तो दूर मुआवजा अब तक नही मिला। जहरीला पानी व मलबा जीवन के लिए खतरे की घंटी बन और किसान से उसका भी मूल्य खींचा गया।

भारतीय किसान यूनियन (अराजनैतिक) की पहल में यह धरना बुलाया गया था। चुनावी सरगर्मी का रूख देखकर राजनीतिक दलों के लोग भी अपना चुनावी भाषण तैयार कर लम्बा चौड़ा आश्वासन दिये। किसान का कहना है कि दीनापुर व आस-पास के गांवों के साथ अन्याय पर अन्याय होता जा रहा है। पाप कर्म पर पोथी तोपन। पानी, बिजली, नौकरी देने की एक भी बात पूरी न हुई। मुआवजा भी चौथाई हिस्सा मिला। वह भी सुप्रीम कोर्ट तक लड़ने में खर्च हो गया। गंदगी से लोग बीमार होकर दवा करते तंगहाली में जवानी के बाद रिघुर-रिघुर कर मरने के लिए बाध्य हैं। शहर के सीवेज का गंदा पानी बिना साफ किये हुये ही कृषि के लिए देकर किसानों से पैसा ऐंठ लिया। सभी राजनीतिक दलों के शासन में ऐसा ही हुआ। इधर दो-तीन वर्षो से सुप्रीम कोर्ट ने इस खुले बहते गंदे पानी से सिंचाई करने पर रोक लगा दी है। आस-पास के गाँवों के पेयजल स्रोतों के दूषित होने की पुष्टि हो गयी है। दीनापुर की यह हालत राजनीतिक स्वार्थी दांव पेंच का शिकार है या प्रशासनिक लापरवाही है इस पर बहस चलती रही है। लेकिन यह सूरज के उजाले की तरह स्पष्ट है कि यह इस प्रौद्योगिकी और आधुनिक विज्ञान की असफलता है।

प्रशासन अब भी मानता है कि कोई वैज्ञानिक ही प्रदूषण नियंत्रण का सूत्रधार होगा। और हालत यह है कि वैज्ञानिक अपनी और अपनी विद्या की कमजोरी को स्वीकार ही नही करता। भुगतना गांव वालो को पड़ता है। खैर, सवाल है कि गाँव का पर्यावरण विषैला करने का मुआवजा कैसे होगा। 25 वर्षो के अनुभवों को संजोये गांव के लोग अपने ज्ञान के बूते तर्क गढ़ रहे हैं। जमीन छीने जाने के बाद इतने वर्षो से लोकविद्या के बल पर ही पारिवारिक जीवन चलाये और साथ ही मुकदमा भी लडे हैं। इन्हीं की लोकविद्या की कमाई से वकील की रोजी चली। गंगा प्रदूषण प्लांट पर पक्की नौकरी पाने वाले कर्मचारियों को सीवेज के मैले को साफ किये बिना भी जो तनख्वाह मिलती रही वह भी किसानों लोकविद्या की कमाई से दी गई, प्रदूषण से बीमारी फैलने के चलते डाक्टर की जेब में भी इन्हीं का पैसा गया। और इसके बदले गाँव के किसान को संघर्षशील कर्म के सिवा क्या मिला? गांव वाले ठीक ही सोचते है कि असफल तकनीक से गांव वालों को हुए नुकसान का भुगतान हो और ली गई जमीन वापस हो।

दीनापुर की इप पंचायत में पहली बार किसानों ने अपनी विद्या, लोकविद्या के पक्ष में सार्वजनिक तौर पर दावा रखा। यही इस पंचायत की विशेषता रही।

दीनापुर की किसानों से भरी इस पंचायत में कुछ सवाल उठे जैसे पहिले किसान भयल कि कृषि वैज्ञानिक? किसान बढिया खेती कर सकला कि वैज्ञानिक? तो सम्मिलित उत्तर आया किसान। त कौन ज्ञानी हौं ? ज्ञान के अभिमान में फँसे पढ़े-लिखें लोग किसान को कृषि वैज्ञानिक के बराबर ज्ञानी मानने से खुद को अपमानित समझते हैं। पंचायत में कुछ पढ़े-लिखे लोगों को यह बात रास नही आयी। उल्टी दिशा में सोचने वाले शिक्षित लोगों को लोक ज्ञान से साझा करने का विचार केवल मजबूर हो जाने पर ही दिखता है। गांव के किसान या कारीगर को वे जाहील ही समझते हैं। फिर पूछा गया कि गांव में छोटे खेत पर गवई साधन, सुविधा, संसाधनों के बल पर उत्तम उत्पादन करके कौन दिखला सकता है, कृषि वैज्ञानिक या किसान? पुनः एक स्वर में उत्तर आया किसान। कई सवाल खड़े किये गये और हमेशा किसान ज्ञान के टक्कर में पढ़े-लिखे से अव्वल सिद्ध हों। पंचायत में आपस में ही बहस हो गयी। पढ़े-लिखे कहने लगे वाह रे, कृषि वैज्ञानिक(प्रोफेसर) कितनी मेहनत से पढ़ कर आता है । तुरंत किसान चढ़ बैठे कि किसान पूस की रातों में, घाम और बरखा में पौधे की रंगत देखकर उसकी बीमारी और जरूरतों को पहचान लेता है वह क्या बिना किसी ज्ञान के? पूस की आधी रात को वैज्ञानिक साहब लाइन आने पर पानी नहीं देंगे बल्कि मजदूर को भेजेंगे और लागत बढ़ा देंगे।

आज इन पढ़े-लिखों का ज्ञान ज्यादा मूल्य प्रतिष्ठा पाकर भी नाकामयाब सिद्ध होता जा रहा है। धरती, पर्यावरण, पानी सबको इन्होंने बिगाड़ा। केचुएं को नुकसान पहुँचाया किसने? पढ़े-लिखों की विद्या ने। दीनापुर सीवेज को तो ये सही ढ़ंग से चला न सके और यहीं फेल हो चुकी तकनीकी सथवां गांव में लगाने चले। इनकी फेल हो चुकी विद्या को कभी तो चुनौती मिलेगी? अब कूड़ा डम्प कर जैविक खाद बनाकर बेचने की तकनीकी के नाम पर जबरन गांव की जमीन हड़पी जा रही है। कब तक इनकी विद्या के धोखे में गांव वाले रहेंगे? खेती की एक-एक इंच जमीन को शहरी विकास के अंधमोह में कंक्रीट के फर्श से दबाते दस-बीस मंजिले पथरीले जंगल बनाते जा रहे हैं। गाँव उजाड़कर शहर को तो बसाया लेकिन शहर एक भी उजड़े गाँव को न बसा सका। बल्कि शहर को स्वच्छ और हरा-भरा रखने के लिए तमाम रासायनिक सीवेज और कूड़ा ठिकाने लगाने के लिए गाँव के गाँव उजाड़े जा रहे हैं। एक तरह से किसान में अपने ज्ञान का अहसास हुआ। अपने ज्ञान के भरोसे दुनियाँ को रोटी देकर क्षुधा तृप्त कर देने का स्वाभीमान जगा। यह एक नये तरह के ज्ञान आंदोलन का दर्शन दिखाई दे रहा है। यहीं धरती, जल, वन से जीविका चलाने वाले लोगों यानि लोकविद्याधर का जन-आंदोलन है।

संक्षिप्त में दीनापुर से किसानों की आवाज कुछ इस तरह है—

अब लौ नसानी, अब ना नसइ हौं
पंडित और वैज्ञानिक देखा,
इन के ज्ञान पर किये भरोसा,
खाद रसायन दवा भी फेका,
उत्पादन भी हुआ अनोखा,
किसान के हिस्से सिरफ लिटटी-चोखा,
अब लौ नसानी अब ना नसइ हौं॥

ये पढ़े-लिखे विकास में
शामिल करने आये,
प्रदूषण का प्लांट लगाये,
बिजली, पानी, नौकरी देंगे,
खुशहाली का ख्वाब दिखाये,
26 सालों से खूब नचाये,
कोर्ट कचहरी अलग लड़ाये,
ये ज्ञानी बनकर बहुत पढ़ाये,
इनका वेतन गांव वाले ही चुकाए
गंदे पानी और मलबे का भुगतान भी किसान चुकाये,
अब लौ नसानी, अब ना नसइ हौं॥
निज ज्ञान भरोसे मुक्ति पइहौं॥

•

लोकविद्या जन आंदोलन का पहला अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन

12, 13, 14 नवंबर 2011

विद्या आश्रम, सारनाथ, वाराणसी

यह अधिवेशन लोकविद्या और लोकविद्याधर समाज का ज्ञान की दुनिया में बराबरी का दावा पेश करने का एक कदम है।

कार्यक्रम

पहला दिन : 12 नवंबर 2011

निम्नलिखित विषयों पर चर्चा होगी–

1. लोकविद्या की संपूर्ण प्रतिष्ठा में ही नयी दुनिया बनाने का रास्ता है।
2. केवल लोकविद्याधर समाज (किसान, मछुआरे, आदिवासी, कारीगर, छोटे दुकानदार और महिलाएं) ही विस्थापन का शिकार हैं। इनकी आपसी एकता में ही समाज में आमूल परिवर्तन का रास्ता है।
3. आजादी के आंदोलन में शुरू हुए पूर्ण स्वराज के संघर्ष का वर्तमान चरण लोकविद्या जन आंदोलन है।
4. लोकविद्या जीवनयापन कानून बनाया जाय।
5. देश के हर वयस्क को नौकरी दी जाय। जिसे जो आता है, (लोकविद्या) के बल पर ये नौकरियां दी जायें। किसी भी नौकरी का मानदेय सरकारी नौकरी के न्यूनतम वेतन से कम न हो।

दूसरा दिन : 13 नवंबर 2011

लोकविद्याधर समाजों के संघर्ष, संगठन व आगे के रास्तों पर चर्चा होगी–

1. विभिन्न क्षेत्रों से आये हुए संगठक अपने क्षेत्रों के संघर्ष और संगठन के बारे में बताएंगे।
2. किसान आंदोलन पर लोकविद्या दृष्टिकोण से व्यापक चर्चा।
3. विभिन्न कारीगर समुदायों द्वारा ज्ञान आंदोलन की संभावना।
4. लोकविद्या स्त्री आंदोलन।
5. लोकविद्या नौजवान सभा।

तीसरा दिन : 14 नवंबर 2011

कला, दर्शन, भाषा और मीडिया पर लोकविद्या दृष्टिकोण से चर्चा होगी। इन क्षेत्रों में हो रहे बदलाव किस तरह लोकविद्या जन आंदोलन मजबूत कर सकते हैं इस पर विभिन्न क्षेत्रों से आये विचारक व कार्यकर्ता चर्चा करेंगे।

तीनों दिन शाम के वक्त समुदायों की आपसी चर्चा तथा विश्वविद्यालयीय विद्या के विशेषज्ञों द्वारा समीक्षात्मक चर्चा के लिए समय होगा।

13 और 14 नवंबर को किसान आंदोलनों की अखिल भारतीय समन्वय समिति की बैठक होगी।

भारतीय किसान यूनियन का वाराणसी के गांवों में शिविरों का आयोजन

शिविर का उद्देश्य : संगठन विस्तार तथा कूड़ा डम्पिंग ग्राउण्ड से ग्रामीणों के समक्ष उत्पन्न प्रदूषण एवं भूमि अधिग्रहण की समस्याओं के खिलाफ जन-जागरुकता और आंदोलन के लिए लोगों को गोलबंद करना। गाँवो की खुशहाली गाँवों के लोगों की विद्या से ही आ सकती है यह समझाना।

दिनांक	गांव का नाम	भागीदारों की संख्या	वक्तागण
22.08.2011	गंज, सारनाथ	70-80	लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार, कृष्ण कुमार, बबलू कुमार, कल्लू मास्टर, भृगुनाथ सिंह, अवधेश सिंह, बचाऊ लाल, रामप्रसाद राजभर, सुदामा देवी, ऊषा देवी।
23.08.2011	बरईपुर, सारनाथ	40-45	सतीश राजभर, खनमन नेता, राधा देवी, भगवन्नी देवी, गंगाजली, सावित्री देवी, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार, कृष्ण कुमार, बबलू, ललित नारायण, चन्द्रावती, प्रेमलता सिंह।
24.08.2011	खजुही, सारनाथ	35-40	ऋषि नारायण, झाऊलाल, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार, कृष्ण कुमार, मुरारी, बबलू कुमार, नन्दलाल।
31.08.2011	करसड़ा	60-65	चुन्नीलाल, बसन्तलाल, भृगुनाथ सिंह, हरिशंकर पटेल, लालती देवी, चन्द्रशेखर।
01.09.2011	बुनकर कॉलोनी	50-60	सलाऊ खान, अनवर खान, राजू खान, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार।
05.09.2011	हरिहरपुर	60-70	कैलाशनाथ वर्मा, पंधारी, तूफानी, लालू पटेल, मनोज यादव, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार।
06.09.2011	पतेरवां	50-60	हरिशंकर, अमरनाथ पटेल, लालती देवी, प्रेमचन्द्र वर्मा, अशोक कुमार पटेल, रमाशंकर पटेल, शिवशंकर, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार।
06.09.2011	गोसाईंपुर	40-50	भाईराम, अशोक सत्ये, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार
10.09.2011	चुरामनपुर	80-90	वमूपाल, सामूपाल, रामजीत यादव, देवेन्द्र यादव, जगदीश पाल, लक्ष्मण प्रसाद, दिलीप कुमार, बबलू कुमार, कृष्ण कुमार, भृगुनाथ सिंह, हरिशंकर पटेल, पारस पाल, बाढ़ू पाल।

पृष्ठ 3 का शेष

महिला वनाधिकार एक्शन कमेटी

इस क्षेत्र में वन विभाग की किसी भी प्रकार की दखल पर तत्काल रोक लगाई जाए।

16. वनाधारित उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए हाट व बाजारों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बने समान पर रोक लगाई जाए।
17. जंगलों में रहने वाले वनाश्रित समुदायों को माओवादियों के नाम पर प्रताड़ित करना बंद किया जाए व वन विभाग एवं पुलिस विभाग द्वारा महिलाओं एवं पुरुषों पर लगे तमाम झूठे केसों को तत्काल प्रभाव से वापस लिया जाए।
18. पूंजीवादी देशों द्वारा लघुवनोपजों के पेटेंट कराये जा रहे हैं, उन पर तत्काल रोक लगायी जानी चाहिए।
19. एकल महिलाओं के जंगल व जमीन पर सामुदायिक वनाधिकार पर मालिकाना हक की मान्यता दी जाए और उनकी आजीविका को सुरक्षित किया जाए।
20. आदिम जनजातियों में घुमन्तू जनजातियों को चिह्नित करके उनके लिए विशेष रूप से जमीन के अधिकार की व्यवस्था कानून में होनी चाहिए।
21. आदिम जनजातियों के लिए विशेष बजट होना चाहिए ताकि उनका संपूर्ण विकास किया जा सके।
22. खनन पर समुदाय का अधिकार होना चाहिए। इस अधिकार को भी वनाधिकार कानून के अंतर्गत लाया जाए व ग्राम वनाधिकार समितियों के साथ मिल कर इसके लिए योजना बनायी जाए।
23. भारत सरकार के जनजातीय मंत्रालय, पर्यावरण तथा वन मंत्रालय द्वारा गठित एन. सी. सक्सेना संयुक्त समीक्षा समिति की रिपोर्ट में की गयी अनुशंसाओं को तत्काल प्रभाव से लागू किया जाए।

महिलाओं के वनाधिकारों को स्थापित करने के लिए वनाधिकार आंदोलन को मजबूत करने के लिए भावी संगठनात्मक कार्यक्रमों को तैयार करने हेतु।

1. महिलाओं के अधिकारों को मजबूत करने के लिए हर क्षेत्र में सशक्त संगठन बनाये जाएं व महिला वनाधिकार एक्शन कमेटी का गठन किया जाए।
2. ग्राम वनाधिकार समितियों का महिलाओं के नेतृत्व में फेडरेशन बनाया जाए।
3. महिलाओं द्वारा एक आंदोलन के तहत वनों के अंदर समाज के काम आने वाले पेड़-पौधों और जड़ी बूटियों के वृक्षों का वृक्षारोपण किया जाए।
4. वनांदोलनों के सामने चुनौती है कि जो अब वन संसाधन हैं, उन्हें कैसे बचाया जाए। इन वन संसाधनों को तमाम घातक कंपनियों, कार्बन कचरे के रूप में इस्तेमाल होने से बचाने व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए जा रहे जलवायु परिवर्तन के नाम पर कई करारनामों से बचाने आदि की चुनौती का सामना करने के लिए विभिन्न वन क्षेत्रों में संघर्ष को तेज करने के लिए रणनीति बनायी जाए।
5. महिला को-ऑपरेटिव बनाने के मामले पर ठोस तरीके से बहस चलायी जाए, इसके लिए हमें कई श्रम संगठनों जैसे एनटीयूआई की मदद ली जानी चाहिए।

●

पृष्ठ 3 का शेष

भूमि अधिग्रहण नहीं भू अधिकार चाहिए

- देशभर में सभी भू-अर्जनों पर तत्काल रोक लगे जब तक की नया संपूर्ण कानून पूरा न बन जाए।
- अब तक हुए विस्थापितों को भूमि व समुचित मुआवजे देने की सही प्रक्रिया तुरंत चालू हो।
- *आजादी से आज तक हुए भूमि-अधिग्रहण, विस्थापन के कारण और पूर्ण हुए पुनर्वास पर एक श्वेत पत्र जारी करे!* इस श्वेत पत्र में आना चाहिए—अधिग्रहित भूमि का प्रयोग, सार्वजनिक हित के लिए अधिग्रहित की गयी भूमि जिसका कोई उपयोग नहीं किया गया और आज भी बीमार और बंद पड़े उद्योगों व अन्य ढांचागत परियोजनाओं ने वापिस नही किया। इन जानकारियों से पूर्ण श्वेत पत्र आम जनता के सामने लाया जाए।

यह समय है कि हम सब साथ खड़े होकर भविष्य की पीढ़ी हेतु खाद्य सुरक्षा हेतु भूमि अधिकार व कृषि भूमि बचायें। आज के वर्तमान संदर्भ में बढ़ती खाद्य मांग की पूर्ति हेतु; विकास की जरूरतों की पूर्ति हेतु; करोड़ों लोगों के आजीविका अधिकार की रक्षा के लिए भूमि उपयोग पर नये सिरे से विचार करने की जरूरत है।

●

बुक पोस्ट

लोकविद्या पंचायत, मासिक समाचार पत्र, विद्या आश्रम (सा 10/82 ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी-221007) की ओर से **डा.चित्रा सहस्त्रबुद्धे** द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित।
website : vidyaashram.org **Blog :** lokavidyapanchayat.blogspot.com , lokavidyajanandolan.blogspot.com **e-mail :** vidyaashram@gmail.com **Phone :** +91-9838944822
प्रेस : **सत्तनाम प्रिण्टर्स**, एस-1/208 के-1, नई बस्ती, पाण्डेयपुर, सारनाथ रोड, वाराणसी-221002